

# आलोक पुस्तकमाला

६

## पद्माकर-रत्नावली

महाकवि पद्माकर की उत्तमोत्तम कविताओं का संग्रह







आलोक पुस्तकमाला सं० ६

पद्माकर-रत्नावली

*padmaker - Ratnavalee*

लेखक

कवि किंकर

*Kavi Kinkar*

SPS

891.431 K 69 P



14515

Sri Pratap Singh  
Library  
Srinagar.

मुद्रक और प्रकाशक

भारतवासी प्रेस, दारागंज-इलाहाबाद

*Bhartvasee press, Allahabad,*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

1941

प्रकाशक

भारतवासी प्रेस

दारागंज—प्रयाग

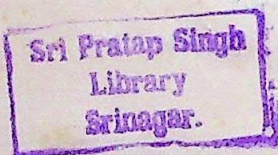
acc: no: 14515

Rs 0-12-0

240

मूल्य॥॥)

सन १९४१



मुद्रक

पं० प्रतापनारायण चतुर्वेदी,  
भारतवासी प्रेस, दारागंज—प्रयाग



## प्रस्तावना

पद्माकरजी की रचनाओं को संचित रूप में पाठकों के कर कमलों में उपस्थित करते हुए हमें अपार आनन्द हो रहा है। प्रस्तुत संस्करण उन साहित्यानुरागी पाठकों के लिये संकलित किया गया है जो स्वल्प मूल्य में एक महाकवि की उत्कृष्टतम रचनाओं का रसास्वादन करने के अभिलाषी हैं। यदि पाठकों ने इसका स्वागत किया, तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे; और आगे चल कर अन्य कवियों की ऐसी ही स्वल्प मूल्य सुन्दर रचनाओं का संग्रह उनके कर कमलों में उपस्थित करेंगे।

प्रयाग  
आषाढी पूर्णिमा  
१९९०

विनीत  
कवि किंकर

हिमालयवासी प्रसिद्ध योगी स्वामी शिवानन्द सरस्वती द्वारा लिखित  
सचित्र

## योगासन और अक्षय युवावस्था

एकाग्र मन सारी सिद्धियों का भण्डार है। विना शरीर को स्थिर किये मन भी स्थिर नहीं हो सकता। शरीर को स्थिर रखने का एकमात्र उपाय आसन का अभ्यास है। आसन सिद्ध करके मनुष्य मानसिक सिद्धियों को ही नहीं पा सकता वरन कायिक सिद्धि अर्थात् अक्षय युवावस्था तक पा सकता है। उक्त पुस्तक में बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री और पुरुष सबके करने योग्य आसन हैं।

१॥

सचित्र

## प्राणायाम और अनन्तशक्ति

ब्रह्माण्ड के समस्त चर और अचर प्राणियों में जो जीवनी शक्ति है और जिससे संसार में गति का संचार होता रहता है उस महान शक्ति नाम प्राण है। इस प्राण पर जो अधिकार प्राप्त कर लेता है वह सब कुछ कर सकता है। भीम के अपरिमित बल, बालि के अजेयत्व, हनुमानजी के समुद्र लंघन, भीष्म की इच्छा मृत्यु और नारद के आकाश गमन के रहस्य का यही भेद है। इस प्राण पर अधिकार पाने की विद्या का नाम ही प्राणायाम है। उसी विद्या का उपदेश एक अनुभवी तथा प्रामाणिक लेखक ने वैज्ञानिक रूप से इस पुस्तक में दिया है।

१॥

मिलने का पता—भारतवासी प्रेस, दारागंज-प्रायग



## पद्माकर-परिचय

जिस समय मुगल कुल कुमुदकलाधर दिल्ली-वल्लभ सम्राट् अकबर भारतवर्ष के एकछत्र अधिपति थे, उस समय दुर्गावती नाम की एक परम पराक्रमशालिनी महाराणी गढ़पत्तन नाम के एक छोटे से नगर पर राज करती थीं। सम्वत् १६१५ के लगभग तैलंग ब्राह्मणों का एक समूह भारतवर्ष के प्रधान प्रधान तीर्थों की यात्रा करता हुआ गढ़पत्तन में आया। इनके साथ साढ़े सात सौ दक्षिणात्य ब्राह्मण थे। इनमें मधुकर भट्ट नाम के एक प्रमुख व्यक्ति थे। इस यात्रा के सम्बन्ध में 'वंशोपाख्यान' में इस प्रकार दिया हुआ है।

वर्षेवाण रसा रसेन्दु मिलितै श्रीमद्गढ़ापत्तने ।

रम्ये नर्मद केाट तीर्थ कलिते दुर्गावती पालिते ॥

मूंगीपट्टनतोऽथवा मधुपुरी श्रीरङ्ग कालेश्वरात् ।

संयाता किल दक्षिणात्य विबुधाः सार्धशतंसप्तच ॥

वंशोपाख्यानम्

कालान्तर में जब गढ़पत्तन में इतने बड़े समुदाय का निर्वाह होना कठिन हो गया तो ये लोग अपनी जीविका की खोज में बाहर निकल पड़े; और धीरे-धीरे आमेर, रतलाम, भालावाड़, बूंदी, कानपुर, आगरा, प्रयाग, काशी और बुंदेलखंड ऐसे नगरों में जाकर रहने लगे। पं० मधुकर भट्ट ने अपने निवास के लिये ब्रज मंडल पसंद किया। इन के साथ कुछ लोग तो श्रीगोस्वामी विठ्ठलनाथजी का आश्रय ग्रहण करके गोकुल में जा बसे; और कुछ लोग मथुरा में रहने लगे। इस प्रकार इन में भी दो शाखाये हो गईं। कालान्तर में मथुरा से जाकर लोग बांदा बुंदेलखण्ड और सागर में रहने लगे। जो लोग बांदा में आये थे उन

( २ )

में मधुकर भट्ट की पाँचवीं पीढ़ी में उत्पन्न जनार्दन भट्ट थे। इनके तीन पुत्र हुए। इन के तीसरे पुत्र मोहनलाल भट्ट का जन्म सम्बत् १७४३ में हुआ था। येही हमारे चरित्र नायक पद्माकर भट्ट के पिता थे।

वयस्कावस्था में मोहनलाल भट्ट ने गुरुचरणों में बैठकर संस्कृत और हिन्दी साहित्य का विधिवत् अध्ययन किया और थोड़े ही दिनों में अपनी प्रखर प्रतिभा के बल से अगाध पांडित्य प्राप्त किया। वे मन्त्र-शास्त्र के भी अद्वितीय ज्ञाता थे। थोड़े ही दिनों में भट्टजी की कीर्ति राज दरबारों में फैलने लगी और नागपुर के भोसला सरदार आपासाहब रघुनाथराव, पन्ना नरेश हिन्दूपति तथा जयपुराधीश महाराज सवाई प्रतापसिंह आदि के दरबारों में इनका वथेष्ट सम्मान होने लगा। वास्तव में भट्टजी निष्णात विद्वान होने के कारण ऐसे राजसम्मान के सर्वथा उपयुक्त पात्र भी थे। विद्या एक बार तो अपने आश्रित को राजदरबार तक पहुँचाही देती है फिर उससे लाभ होना भाग्य पर निर्भर है।

सम्बत् १८१० में पांडित मोहनलाल भट्ट के एक पुत्र हुआ। उस समय ये सागर में रहते थे। इनका नाम पद्माकर रक्खा गया। साहित्यिक वातावरण में पलने के कारण पद्माकर की भी अभिरुचि साहित्य की ओर हुई और यथासमय वे भी हिन्दी और संस्कृत के अच्छे ज्ञाता हो गये। जिस कार्यक्षेत्र को पिता ने तैयार कर रक्खा था पुत्र ने उसमें सकलतापूर्वक पदार्पण किया और थोड़े ही दिनों में ख्याति प्राप्त की।

इसी समय बुंदेलखण्ड मंडलान्तरगत कुलपहाड़ निवासी नौने अर्जुनसिंह पामर ने पद्माकर को अपने यहां निमन्त्रण देकर बुलवाया, और लक्ष्मी पाठ के द्वारा अपने खज्ज को सिद्ध करवा के उनसे दीक्षा ग्रहण की और इसके पुरस्कार स्वरूप उन्हें प्रभूत धन धान्वा



( ३ )

देकर सन्तुष्ट किया । नोने अर्जुनसिंह, उस समय अजयगढ़ के राजा बख्तसिंह बुंदेला के अभिभावक थे, जो उस समय तक अल्प वयस्क होने के कारण राजसूत्र संचालन के योग्य न था । कुमार बख्त सिंह की इस निर्बलता से लाभ उठाकर गोसाईं अनूपगिरि ने सम्वत् १८४६ में अजयगढ़ पर आक्रमण कर दिया । [इनका उपनाम हिम्मत बहादुर था और यह बाँदा के नवाब अली बहादुर साहेब के सेनानायक थे । ये सनाढ्य ब्राह्मण थे और राजेन्द्रगिरि गोसाईं के शिष्य थे । अवध के नवाब शुजाउद्दौला के समय कई युद्धों में लाकोत्तर वीरता प्रदर्शित करने के कारण इन्हें हिम्मत बहादुर की उपाधि दी गई थी । सम्वत् १८१६ के सुप्रसिद्ध बक्सर संग्राम में इन्होंने भाग लिया था । इसके उपरान्त इन्होंने बाँदा के नवाब अली बहादुर का सेना नायकत्व ग्रहण किया । परन्तु नवाब से भी इन से बहुत दिन तक न बनी । अंत में सम्वत् १८५६ में उन्होंने बाँदा पर अंग्रेजों का अधिकार करा दिया । इसके उपलक्ष्य में इन्हें प्रमाण पत्र भी मिला था । इनका देहांत सम्वत् १८६३ में हुआ ।

नोने अर्जुनसिंह से इनका बड़ा घोर युद्ध हुआ । इस युद्ध में पद्माकर न जाने क्यों हिम्मत बहादुर के साथ थे और उनकी प्रशंसा में उन्होंने “हिम्मत बहादुर विरुदावली” लिखी है । यहाँ पर खेद के साथ लिखना पड़ता है कि पद्माकर ने जिस प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने पूर्व आश्रयदाता नोने अर्जुनसिंह को छोड़कर हिम्मत बहादुर का पक्ष ग्रहण किया था उसका समर्थन किसी प्रकार से नहीं किया जा सकता । यदि थोड़ी देर के लिये यह भी मान लें कि अर्जुनसिंह से उनकी कुछ अनबन हो गई थी तो भी क्षणिक वैमनस्य के कारण अपने प्रथम आश्रयदाता के उपकारों को भुलाकर उसके शत्रु का पक्ष ग्रहण करना पद्माकर जैसे कवि को कदापि शोभा नहीं देता । इसके अतिरिक्त कुमार बख्तसिंह के राज्य का अपहरण करने के अभिप्राय से हिम्मत बहादुर

ने जिस कुटिल नीति का आश्रय लिया था उस पर दृष्टिपात करते हुए, पद्माकर के द्वारा हिम्मत बहादुर की प्रशंसा किया जाना और भी अनुचित है।

हिम्मत बहादुर के दरबार में कायस्थ वंश सम्भूत लाला ठाकुरदास नाम के एक कवि थे जो सुन्दर रचना भी करते थे। इनसे पद्माकर की प्रतिद्वंद्विता लगी रहती थी। एक बार हिम्मत बहादुर ने पद्माकर से प्रश्न किया कि लाला ठाकुरदास की रचना के विषय में आपका क्या मत है ? पद्माकर ने उत्तर दिया कि महाराज ! कविता तो अवश्य होती है, पर पदावली में गम्भीरता का अभाव है। यदि यह हलकी न होती तो और भी श्रेष्ठ होती। लाला साहेब भला ऐसी कटु आलोचना सुनने को कब तैयार थे। आपने तुरन्त उत्तर दिया कि हमारी कविता हलकी होने के कारण ही उड़ती फिरती है। पद्माकरजी इस 'उड़ती हुई' का अर्थ अच्छी तरह समझ गये और चुप रहे। लाला साहेब की प्रत्युत्पन्नमति ने उन्हें लज्जित कर दिया।

सम्बत् १८५६ में रघुनाथ राव को सागर की गद्दी मिली। पद्माकर जी उस समय उनके दरबार में गये और उनकी प्रशंसा में उन्होंने बड़े ही उत्कृष्ट छंद पढ़े। इस प्रशंसा से प्रसन्न होकर राव साहेब ने उन्हें प्रभूत दान दक्षिणा से सुन्बुष्ट कर के अपने दरबार का कवि बनाया। कहते हैं कि पद्माकर रावसाहेब के अन्तःपुर तक जाया करते थे और रानियां इनसे परदा नहीं करती थीं।

सम्बत् १८५८ में पद्माकर जयपुर गये उस समय महाराज स्वार्द्ध प्रतापसिंहजी वहां का राज्यसूत्र-संचालन करते थे। महाराज प्रतापसिंह स्वयं काव्य मर्मज्ञ एवं सत् कवि थे और साथ ही कवियों के कल्पतरु भी थे। पद्माकर ने उनकी प्रशंसा में बड़े सुन्दर छन्द पढ़े जिससे प्रसन्न होकर महाराज ने उन्हें बहुत कुछ दान दक्षिणा से पुरस्कृत किया और



( ५ )

अपना राजकवि बनाया । महाराज के सम्मान से सन्तुष्ट होकर पद्माकर बहुत दिनों तक उनके दरबार में रहे ।

कहते हैं कि एक बार महाराज प्रतापसिंह पद्माकर के साथ काशी में आये । यह श्रावण का महीना था और कोई मेला हो रहा था । उसमें अबलायेँ गाती हुई जा रही थीं और बनारसी गुंडे उनके ऊपर छींटे कसते हुए जा रहे थे । महाराज गुंडों की इन उक्तियों का अर्थ नहीं समझ सके और उन्होंने “रंग है रां रंग” का भाव स्पष्ट करने के लिये पद्माकर की ओर सङ्केत किया । इस पर उन्होंने ऐसी सुन्दर पूर्ति सुनाई कि महाराज ने इन्हें एक सहस्र हेम मुद्रा पारितोषिक स्वरूप प्रदान को । काशी में दान लेना पद्माकर के लिये एक बिकट समस्या हो गई; पर वे सहस्र राजाज्ञा का विरोध भी नहीं कर सकते थे । यद्यपि पद्माकर ने अत्यंत विनम्रतापूर्वक काशी जैसे क्षेत्र में दान लेने से प्रकारान्तर में कुछ निषेध सा किया पर महाराज का प्रबल आग्रह देखकर उन्हें अन्त में स्वीकार करना पड़ा । इस दान का पद्माकरजी ने बड़ा ही सदुपयोग किया । अपनी ओर से इस में कई सौ हेम मुद्राएँ मिलाकर उन्होंने इस धन को वाराणसी के विद्वानों में बाँटा । प्रत्येक पंडित को एक एक बनात और एक एक मुद्रा दी गई ।

कहते हैं कि पद्माकर जब कहीं जाते तो बड़े समारोह के साथ जाया करते थे । उनके साथ हाथी ऊँट, सवार, रथ और दो चार वाराणसी भी जाया करती थीं । कभी-कभी तो इस समारोह को देखकर ग्रामीणों का इस बात की आशङ्का होने लगती थी कि कहीं कोई राजा तो हमारे ऊपर नहीं चढ़ आया है ।

जयपुर में इस प्रकार महाराज प्रतापसिंह का आश्रय पाकर पद्माकरजी बहुत दिनों तक रहे और अपनी काव्य कला से महाराज को प्रसन्न करके लक्षार्वाध मुद्राओं का दान पाते रहे । सन् १८६० में

( ६ )

उन्तालीस वर्ष की अवस्था में महाराज प्रतापसिंह का स्वर्गारोहण हुआ। इस समय इनकी रानी जोधपुर में सती हुई थी।

महाराज प्रतापसिंह के अनन्तर महाराज सवाई जगत सिंह राज्याधिकारी हुए। वे भी अपने पिता के समान ही गुणग्राहक थे। उन्होंने पद्माकर का बड़ा सत्कार किया और अपने दरबार का राजकवि बनाया। इनके राजोत्सव के उपलक्ष्य में पद्माकर ने उत्कृष्ट छंद पढ़े थे। इनकी कविता से प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें अपने नाम पर “जगत-विनोद” बनाने की आज्ञा दी। कहते हैं कि इस रचना के उपलक्ष्य में पद्माकर को अपार दान मिला था। सम्वत् १८७५ में महाराज सवाई जगतसिंह का स्वर्गवास हुआ।

इस प्रकार जयपुर दरबार से आश्रयहीन होकर पद्माकर ग्वालियर आये। इस समय यहाँ महाराज बहादुर श्रीदौलतराव सेंधिया राजसिंहासन पर विराजमान थे। पद्माकर ने उनका प्रशंसा में बड़े ही उत्कृष्ट छंद पढ़े। इनकी काव्य रचना से प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें अपार दान दिया और अपने नाम पर “आलो जाह प्रकाश” नाम का एक रीति ग्रन्थ बनाने का आग्रह किया। पद्माकर ने बड़े उत्साह से इसकी रचना की और सम्वत् १८७८ में इसे पूर्ण किया।

सेंधिया दरबार में ऊदाजी नाम के एक दक्षिणात्य ब्राह्मण रहते थे। पद्माकर की कवि प्रतिभा पर मुग्ध होकर वह भी इन्हें बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। एक दिन ऊदाजी इनसे अनुरोध किया कि यदि आप संस्कृत के हितोपदेश का पद्यबद्ध भाषा अनुवाद कर दें तो बड़ा अच्छा हो। पद्माकरजी ने उनका आग्रह मानकर हितोपदेश का भाषानुवाद तैयार किया और इसके उपलक्ष्य में ऊदाजी ने इन्हें बहुत कुछ दान दक्षिणा से पुरस्कृत किया।

ग्वालियर से पद्माकरजी उदयपुर गये। उस समय वहाँ हिन्दूपति



( ७ )

महाराणा भीमसिंह राज्य करते थे । उन दिनों गनगौर का मेला हो रहा था । उस मेले में महाराज भीमसिंह स्वयं आये थे । उनके समक्ष गनगौर के मेले पर पद्माकर ने बड़े सुन्दर छंद पढ़े, जिस से महाराज भीमसिंह बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने बहुत कुछ दान दिया ।

पद्माकर का अंतिम जीवन बहुत कष्टमय रहा । कहते हैं कि जयपुर निवास के समय इनका किसी सेनागिनी के साथ अनुचित सम्बन्ध हो गया था । कुछ दिनों के बाद इन्हें कुष्ठ भी हो गया । परन्तु इन्होंने “राम रसायन” और “प्रबोध पचासा” की रचना कर के इस रोग से मुक्ति पाई ।

रोगमुक्त होकर अन्त में ये चरखारी नरेश से मिलने के लिये गये, परन्तु उन्हें पहिले ही से इनकी कलङ्क कथा का पता लग गया था; इसलिये उन्होंने इनसे मिलने स स्पष्ट निषेध कर दिया । इससे पद्माकर के भावों पर बड़ी ठेस लगी और उसी दिन से इन्होंने संकल्प कर लिया कि अब किसी राजा राव से कदापि मिलने न जायेंगे । पद्माकर गङ्गा सेवन के लिये चले आये और कानपुर में ८० वर्ष की अवस्था में इनका शरीरान्त हुआ ।

पद्माकर के दो पुत्र हुए । इनके नाम थे मिर्हीलाल और अम्बा-प्रसाद । अम्बाप्रसाद का उपनाम ‘अम्बुज’ था और यह मिर्हीलाल से छोटे थे । इनके वंशधर अब भी संयुक्तप्रान्त और मध्य प्रान्त के भिन्न-भिन्न राज्यों में निवास करते हैं ।

कविता के द्वारा कांवरे चंदवरदाई से लेकर रीति काल तक के बहुत से प्रसिद्ध कवियों ने यथेष्ट धन और कीर्ति उपार्जन की । इनमें पद्माकर और भूषण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । लाला भगवानदीन जी का मत है कि पद्माकर ने ५६ गांव, इतने ही लक्ष रुपये और इतने ही हाथी कविता के द्वारा भिन्न भिन्न राजाओं से प्राप्त किये थे । आज

( ८ )

भो उनके वंशज कई गांकों के स्वामी हैं और उनके पास इस सम्बन्ध में प्रमाणपत्र भी हैं ।

पद्माकर की रचना में अपार ओजस्विता मिलती है । कुछ आलोचकों का मत है कि उनकी वाणी में यह ओजस्विता तारादेवी के इष्ट के कारण आई थी । इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिन कवियों को तारा देवी का इष्ट होता है उनकी वाणी में लोकोत्तर ओजस्विता होती है । हमें यह बात भली भाँति मालूम है कि कविवर लच्छिराम को तारा का इष्ट था । इसीलिये इनकी वाणी में जैसी ओजस्विता है वह किसी आलोचक से छिपी नहीं है । उन्होंने तारा को लक्ष्य करके बड़े उत्कृष्ट छंद भी कहे हैं ।

हमारे विचार से पद्माकरजी वैष्णव थे और उन्हें राम या शिव का इष्ट अधिक था । इसके प्रमाण में पद्माकर की रचनाओं से सैकड़ों छंद उद्धृत किये जा सकते हैं । राम नाम को महिमा का उन्होंने मुक्त कंठ से गान किया है, और साथ ही साथ भगवान शङ्कर की भक्ति में भी छंद लिखे हैं ।

### पद्माकरजी की रचनायें

पद्माकरजी ने सब मिलाकर नौ पुस्तकें लिखी हैं इनके नाम हैं “राम रसायन, हिम्मत बहादुर विरुदावली, जगत विनोद, पद्माभरण, जयसिंह विरुदावली, आलीजाह प्रकाश, हितोपदेश, प्रबोध-पचासा, और गङ्गा लहरी” । इनमें से जयसिंह विरुदावली, आलीजाह प्रकाश और हितोपदेश को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, अतः पद्माकरजी की जिन जिन रचनाओं को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उन्हीं का परिचय यहाँ पर दिया जायगा ।



( ९ )

## राम रसायन

यह आदि कवि वाल्मीकिजीकी अमर कृति के तीन काण्डों का भाषानुवाद है। इसमें महाकाव्य की पद्धति का अनुसरण कर के पद्या-करजी ने दोहा चौपाई और हरिगीतिका आदि छंदों का बहुतायत से प्रयोग किया है। इसे भावानुवाद भले ही कह लें पर इसमें वह बात नहीं आने पाई है जिससे अनुवाद का गौरव बढ़ता है। इसके अतिरिक्त इसकी भाषा शिथिल है। पदावली सशक्त नहीं है, प्रबन्ध में भी शिथिलता है, इसी आधार पर कुछ लोग तो इसे पद्याकर की रचना मानने को तैयार नहीं; पर हमारा व्यक्तिगत अनुमान तो यह है कि यह पद्याकर का प्रथम प्रयास होगा; इसीलिये उसमें प्रौढ़त्व का अभाव है, जो पद्याकर की रचना का विशेष गुण माना जाता है।

## हिम्मत बहादुर विरुदावली

हिम्मत बहादुर विरुदावली की रचना सम्वत् १८५० के लगभग प्रतीत होती है। इसमें गोसाईं रूपगिरि के वीरता पूर्ण युद्ध का वर्णन है। इसमें सब मिलाकर २१२ छंद हैं और प्रायः अधिकांश हरिगीतिका छंद हैं। पुस्तक का विषय पांच सर्गों में विभक्त है। वीररस के अनु-कूल ओज् गुण और परुषावृत्ति की उद्भावना करने के लिये पद्याकर ने इसमें बहुत से शब्दों को विकृति कर दिया है। वीर रस की सुन्दर व्यञ्जना नहीं हो पाई। इसमें तड़ाक भड़ाक के अतिरिक्त और कोई साहित्य स्वारस्य नहीं है।

## जगत विनोद

यह पद्याकरजी का सर्वोत्कृष्ट काव्य ग्रन्थ है। इसकी रचना महाराज जगतसिंह के लिये की गई थी और कहते हैं कि उसके उपलब्ध में पद्याकर को बहुत कुछ पुरस्कार मिला था। रस के विषय पर यह

( १० )

सब से अच्छा ग्रन्थ है। संस्कृत की सी व्याख्या प्रणाली के अभाव का दोष यद्यपि इसमें कुछ खटकता सा है पर इसके रहते हुए भी 'जगत विनोद' एक अच्छी रचना है और इस का प्रचार भी अधिक है।

### पद्माभरण

यह अलंकार की एक छोटी सी पुस्तिका है और यह कववर जय-देवजी के चन्द्रलोक के आधार पर बनाया गया है। दोहे के पूर्वार्ध में अलंकार का लक्षण है और परार्ध में उदाहरण। महाराज जसवन्त-सिंह प्रणीत 'भाषा भूषण' भी इसा प्रकार की रचना है। दोनों ही में कहीं-कहीं लक्षण और उदाहरण में सामञ्जस्य नहीं घटता।

### आलीजाह प्रकाश

यह ग्रन्थ सम्वत् १८७८ में ग्वालियर के महाराज बहादुर श्रीदोलत राव सिंधिया के लिये बनाया गया था। यह रीति ग्रन्थ है। यह अभी तक छपा नहीं है।

### हितोपदेश

इसकी रचना भी लगभग उसी समय की है। यह सिंधिया दरबार के प्रमुख कर्मचारी श्रीऊदाजी दाक्षिणात्य के अनुरोध से बनाया गया था। इसकी रचना शिथिल है।

### प्रबोध पचासा

यह रचना पद्माकरजी के वृद्धावस्था की है जिस समय उनके हृदय में वैराग्य दृढ़ मूलक हो गया था फलतः इस रचना में ज्ञान-वैराग्य सम्बन्धी एक से एक अच्छे मार्मिक छंद हैं।

### गंगा लहरी

यह पद्माकरजी की अन्तिम रचना है। इसके भी छंद बड़े उत्कृष्ट



( ११ )

हैं। प्रबोध पचासा के बहुत से भावों की इसमें पुनरुक्ति सी हो गई है। इसमें गंगाजी की अधम उधारिणी कीर्ति का वर्णन है।

### जयसिंह विरुदावली

यह पुस्तक हमारे देखने में नहीं आई इसलिये इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता।

अन्त में सब मिलाकर पञ्चाकर की रचना सुन्दर है। इसकी भाषा भावों की अपेक्षा अधिक सुन्दर है। कहीं संस्कृत के चुटोले छंदों के अनुवाद भी हैं और वे अत्यंत सुन्दर हैं। ग्रामों में आज भी पञ्चाकर की रचना का अधिक प्रचार है।

# सचित्र सन्ध्यायोग

## खरीदिये

सन्ध्या एक ऐसी चमत्कारपूर्ण क्रिया है जिसका गुणगान सृष्टिकर्ता ब्रह्मा से लेकर बड़े बड़े ब्रह्मर्षि तथा देवर्षि तक करते हैं। सन्ध्या गायत्री के ही बल पर घोर जंगलों में ऋषिगण राजसी सुख भोगते थे। उपवीत द्विजाति के लिये सन्ध्या न करना आत्म हत्या करना बराबर है। यह पुस्तक सन्ध्या के अनेक चमत्कारपूर्ण ज्ञातव्यों से पूर्ण है। यही एक पुस्तक है जिसके सम्बन्ध में अंगरेजी का प्रसिद्ध दैनिक लीडर लिखता है:—

“.... The book deserves to find a place in every Hindu home. The chapters on *Gayatri Bhakton Ke Anubhav* and *Science of jap* are very interesting and instructive and throw new light on the subject.

“..... प्रत्येक यज्ञोपवीत धारण करने वाले द्विजाति को इस पुस्तक को उसी तरह रखना चाहिये जिस तरह ईसाई बाइबिल और मुसलमान कुरान रखता है। सन्ध्या के ऊपर ऐसी उत्तम और मौलिक पुस्तक निकलने से हिन्दी-भाषा के भंडार की बढ़ती हुई है। आज यदि राजा भोज का राज्य होता तो मुझे पूर्णविश्वास है कि एक इसी पुस्तक की बदौलत लेखक महोदय निहाल हो जाते। इस पुस्तक को पढ़ कर सन्ध्या करने के लिये अपने आप इच्छा होती है। मूल्य १॥) —देशदूत

भारतवासी प्रेस, दारागंज, इलाहाबाद।



# पद्माकर-रत्नावली

## गङ्गा लहरी

चढ़ती विरंचि भई बामन पगन पर,  
 फैली फैली फिरी ईस सीस पै सुगथ की ।  
 आइ के जहान जन्हु-जंघा लपटाई फेरि,  
 दीनन के हेत दौरि कीन्हीं तीन पथ की ।  
 कहै 'पदमाकर' सुमहिमा कहाँ लौं कहौ;  
 गंगा नाम पायौ सोई सब के अरथ की ।  
 चारचौ फल फली फूली गहगही गहबही,  
 लहलही कीरति लता है भगीरथ की ॥

( २ )

कूरम पै कोल कोलहू पै सेस कुंडली है,  
 कुंडली पै फबी फैल सुफन हजार की ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों फन पै फबी है भूमि,  
 भूमि पै फबी है थिति रजत पहार की ।  
 रजत पहार पर सम्भु सुरनायक है,  
 संभु पर ज्योति जटा जूट है अपार की ।  
 संभु जटा जूटन पै चंद की छुटी है छटा,  
 चंद की छटान पै छटा है गंग धार की ॥

सब के अरथ की—सब के काम की । कूरम—कछुआ । कोल—  
 शूकर । थिति—स्थिति । रजत पहार—कैलाश । फबी—शोभित ।

( ३ )

सहज सुभाय आय एक महा पातकी की,  
 गंगा मैया धोई तू तो देह निज आप है ।  
 कहै 'पदमाकर' सु महिमा मही में भई,  
 महादेव देवन में बाढ़ी थिर थाप हैं ।  
 जकि-से रहे हैं जम थकि से रहे हैं दूत,  
 दूनी सब पापन के उठी तन ताप है ।  
 बाँची वही वाकी गति देखि कै विचित्र रहे,  
 चित्र कैसे लिखे चित्रगुप्त चुपचाप हैं ॥

( ४ )

करम को मूल तन तन मूल जीव जग,  
 जीवन को मूल अति आनंद ही धरिबो ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों आनंद को मूल राज,  
 राजमूल केवल प्रजा को भौन भरिबो ॥  
 प्रजामूल अब सब अवन को मूल मेघ,  
 मेघन को मूल एक जज्ञ अनुसरिबो ।  
 जज्ञन को मूल धन, धन मूल धर्म अरु,  
 धर्म मूल गंगा-जल विन्द पान करिबो ॥

---

मही—पृथ्वी । थाप—आतंक । जकि—बढ़ाता । भौन—घर ।  
 जज्ञ—हवन । विन्द—बूंद ।



( ५ )

गंगा के चरित्र लिखि भाष्यो जमराज यह,  
 एरे चित्रगुप्त मेरे हुकुम में कान दें ।  
 कहै 'पदमाकर' नरक सब मूँदि करि,  
 मूँदि दरवाजेन को तजि यह थान दें ।  
 देखु यह देवनदी कीन्हें सब देव यातें,  
 दूतन बुलाइ कै बिदा के बेगि पान दें ॥  
 फारि डारु फरदन राखु रोजनामा कहूँ,  
 खाता खाति जान दै बही को बहि जान दें ॥

( ६ )

जान्यो जिन जज्ञ है न जोग जप जागरन,  
 जन्महि वितायौ जग जोयन को जोड़ कै ।  
 कहै 'पदमाकर' सुदेवन की सेवन तें,  
 दूरि रहे पूरि मति बेदरद होइकै ।  
 कुटिल कुराही कूर कलही कलंकी कलि,  
 कलि की कथान में रहे जे मति खोइकै ।  
 तेउ बिस्नु अंगन में बैठे सुर-संगन में,  
 गंग की तरंगन में अंगन को धोइ कै ।

---

थान—स्थान । देवनदी—गङ्गा । जगजोयन को—संसारिक स्त्रियों  
 को । जोड़ कै—देख कर । बेदरद—निर्दयी । बिस्नु अंगन—वैकुण्ठ ।

( ७ )

आयौ जौन तेरी धौरी धारा में धसत जात,  
 तिनको न होत सुरपुर में निपात है ।  
 कहै 'पदमाकर' तिहारो नाम जाके मुख,  
 ताके मुख अमृत को पुंज सरसात है ।  
 तेरो तोय छूँवै कै औ छुवति तनजा को बात,  
 तिनकी चलै न जम लोकन में बात है ।  
 जहाँ जहाँ मैया तेरी धूरि उड़ि जाति गंगा,  
 तहाँ तहाँ पापन की धूरि उड़ि जात है ।

( ८ )

विधि के कमंडल की सिद्धि है प्रसिद्ध यही,  
 हरि-पद पंकज-प्रताप की लहर है ।  
 कहै 'पदमाकर' गिरीश-सीस-मंडल के,  
 मुंडन की माल ततकाल अवहर है ।  
 भूपति भगीरथ के रथ की सुपन्थ पथ,  
 जन्हु जप जोग फल फैल की फहर है ।  
 छेम की छहर गंगा रावरी लहर,  
 कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है ॥

---

धौरी—श्वेत । निपात—गिरना । धूरि—रज । धूरि उड़ि जात है—द्वार हो जाते हैं । गिरीश-सीस मंडल के—महादेव जी के मस्तक के । अवहर है—पाप को दूर करने वाले ।



## गङ्गा लहरी

५

( ९ )

जमपुर द्वारे लगे तिनमें केवारे कोऊ,  
 हैं न रखवारे ऐसे बन के उजारे हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' तिहारे प्रन धारे तेउ,  
 करि अघ भारे सुरलोक में सिवारे हैं ।  
 सुजन सुखारे करे पुण्य उजयारे अति,  
 पतित-कतरि भव सिन्धु तें उतारे हैं ।  
 काहू ने न तारे तिन्हें गंगा तुम तारे, और,  
 जेते तुम तारे तेते नम में न तारे हैं ॥

( १० )

सुचित गोविन्द है कै सोवते कहाँ धौं जाइ;  
 जलजंतु पंति मरि जैवे को अमिलती ।  
 कहै 'पदमाकर' सु जादा कहौं कौन अव,  
 जाती मरजाद है मही की अनमिलती ।  
 जल थल अतरिच्छ पावते क्यों पापी मुक्ति,  
 मुनि जन जापकन जो न दुरि मिलती ।  
 सुख जातौ सिन्धु बड़वानल की स्मरण सों,  
 जो न गंगाधार है हजार धार मिलती ॥

तारे—मुक्त किये । तारे—नक्षत्र । प्रन—प्रतिज्ञा । तेते—उतने ।

( ११ )

हौं तौ पंचभूत तजिबे कों तव्यौ तोहिं पर,  
 तैं तौ कर्यौ मोहि भलौ भूतन को पति है ।  
 कहै 'पदमाकर' सु एक तन तारिबे में,  
 कीन्हें तन ग्यारह कहौ सो कौनि गति है ।  
 मेरे भाग गंग यहै लिखी भागीरथी तुम्हैं,  
 कहिये कछुक तौ कितेक मेरी मति है ।  
 एक भव सूल आयौ मेटिबे को तेरे कूल,  
 तोहिं तौ तिसूल देत वार न लगति है ॥

( १२ )

भाषा होति भूषित सु पूरी अभिलाषा होति,  
 सुजस लतानि की सुसाखा है सुगति की ।  
 कहै पदमाकर त्यों वदन विसाल होत,  
 हाल होत हेरि छल-छिद्रन की खति की ।  
 गंगाजू तिहारे गुनगान करै अजगवै,  
 आनि होति वरष सु आनंद की अति की ।  
 पूर होत पुन्यन को धूरि होत अधरम,  
 चूर होति चिंता दूर होति दुरमति की ॥

पंचभूत तजिबे कों—शरीर छोड़ने को । भूतन का पति—महादेव ।  
 कूल—किनारे । भवसूल—संसार रूपी कंटक । वार—देर ।



## गङ्गा लहरी

७

( १३ )

पापन की पाँति भाँति भाँति बिललाति परी,  
 जम की जमाति हलकंपनि हिलति है ।  
 कहै 'पदमाकर' हमेसा दिव्यबीथिन में,  
 बानन की रेल ठेल ठेलनि ठिलति है ।  
 सुर धुनि रावरे उधारे जग जीवन की,  
 छिन छिन सेन सिवलोक को मिलति है ।  
 आसन अरध देत-देत निसि बासर,  
 बिचारे पाकसासन को साँस न मिलति है ॥

( १४ )

सूधरो जो होतो माँगि लेतो और दूजो कहूँ;  
 जातो बन खेती करि खाते एक हर की ।  
 ए तो 'पदमाकर' न मानत है नाथि चलें,  
 भुजन के साथ है गेरया अजगर की ।  
 मैं तो याहि छाँड़ों पै न मोकों यह छाँड़त है,  
 फेरि लै रो फेरि व्याधि आपने बगर की ।  
 सैल पै चढ़त गहि ऊरध की गैल गंगा,  
 कैसो बैल दीन्हों जो न गैल गहै घर की ॥

बिललाति—बिलखती है । दिव्यबीथिन—'दिव्य मार्गों' में । सुर धुनि—  
 दैवीनाद । निसि बासर—दिन रात । पाकसासन—इन्द्र । साँस न मिलति  
 है—चैन नहीं पड़ती है । व्याधि—दुख । सैल—कैलाश । गैल—रास्ता ।

८

## पद्माकर-रत्नावली

( १५ )

सवन के बीच बीच समै महा नीच-मुख,  
 गंगा मैया तेरे आजु रैन कन द्रै गयो ।  
 कहे 'पद्माकर दसा यों सुनौ ताकी बाकी,  
 छवि की छटान सों त्यों छित छोर छवै गयो ।  
 दूत दबकाने चित्रगुप्त चुपकाने औ,  
 जकाने जमजाल पाप पुंज लुंज त्वै गये ।  
 चारि मुख चारि भुज चाहि चाहि रहे ताहि,  
 पंचन के देखत ही पंचमुख ह्वै गये ॥

( १६ )

जोग जप जागै छाँड़ि जाहु न परागै मैया,  
 मेरी कही आँखिन के आगे सुतौ आवैगी !  
 लैहैं छीनि अंबर दिगंबर के जोरावरी,  
 बैल पै चढ़ाइ फोरे सैल पै चढ़ावैगी ।  
 कहे 'पद्माकर' न ऐहै काम सरसूती,  
 साँचहू कलिंदी कान करन न पावैगी ।  
 मुंडन के माल नी भुजंगन के जाल की,  
 सु गंगा गजखाल की खिलत पहिरावैगी ॥

पाप पुंज लुंज—पापों के समूह नष्ट हो गये । चारि मुख—ब्रह्मा ।  
 चारि भुज—विष्णु । कलिंदी—जमुना । खिलत—वस्त्र ।



## गङ्गा लहरी

९

( १७ )

कलि के कलंकी कूर कुटिल कुराही केते,  
 तरिगे तुरंत द्वै लीन्ही रेनु-राह जब ।  
 कहै 'पदमाकर' प्रयास विन पावै सिद्धि,  
 मानत न कोऊ, जम दूतन की दाह दब ।  
 कागज करम-करतृति के उठाइ धरे,  
 पचि पचि पेच में परे हैं प्रेतनाह अब ।  
 बेपरद बेदरद गजब गुनाहिन के,  
 गंगा की गरक कीन्हें गरद गुनाह सब ॥

( १८ )

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ,  
 तीनों लोकनायक सो कैसे को उहरतो ।  
 कहै 'पदमाकर बिलोकि इमि ढंग जाके,  
 वेदह पुरान गान कैसे अनुसरतो ।  
 बाँधि जटा जूट बैठि परवत कूट माहिँ,  
 महाकाल कूट कहौ कैसे कै उहरतो ।  
 पीवै नित भंगै रहै प्रेतन के संग रहै,  
 पूछतो को नंगै जो न गंगै सीस धरतो ॥

प्रयास—परिश्रम । करम-करतृति—सुकृति का फल । पचि पचि—  
 परेशान होकर । प्रेतनाह—यमराज । गंगा की गरद—गंगा की धूल ।  
 गरद—नष्ट । लोचन असम—तीन नेत्र । नंगै—महादेव ।

१०

## पद्माकर-रत्नावली

( १९ )

पापी एक जात हुतो गंगा के अन्हाइवे को,  
 तासों कहै कोऊ एक अधम अपान में ।  
 जाहु नहि पंथी उत विपति विशेषि होति,  
 मिलैगी महान काल कूट खान पान में ।  
 कहै 'पदमाकर' भुजंगनि बधैंगे साँप,  
 संग में सुभारी भूत चलैंगे मसान में ।  
 कमर कसैंगे गजखाल ततकाल, बिन  
 अंवर फिरैंगो तू दिगंबर दिसान में ।

( २० )

रेनुका की रासन में कीच कुस कासन में,  
 निकट निवासन में आसन लदाऊ के ।  
 कहै 'पदमाकर' तहाँई मंजु सूरन में,  
 धौरी-धौरी धूरन औ पूरन प्रभाऊ के ।  
 वारन में पारन में देखहु दरारन में,  
 नाचति है मुकुति अधीन सब काऊ के ।  
 कूल औ कछारन में गंगाजल धारन में,  
 मँझरा मझारन में झारन में झाऊ के ॥

अन्हाइवे—नहाने के लिये । अंवर—कपड़ा । रेनुका—रेत ।  
 रासन—ढेर । झारन—पेड़ । मुकुति—मुक्ति ।



## गङ्गा लहरी

११

( २१ )

कैधौ तिहूँ लोक की सिँगार की विसाल माल,  
 कैधौ जगी जग में जमाति तीरथन की ।  
 कहै 'पदमाकर' बिराजै सुर सिंधु धार,  
 कैधौ दूधधार कामधेनुनन के थन की ।  
 भूपति भगीरथ के जस की जुलूस कैधौ,  
 प्रगटी तपस्या कैधौ पूरी जन्हु जनकी ।  
 कैधौ कछू राखै राका-पति सों इलाका भारी,  
 भूमि की सलाका कै पताका पुन्यगन की ।

( २२ )

तेरे तीर जौ लौँ एक लहर निहारियतु;  
 तौ लौँ कैयौ लच्छ सूच्छ लहरन धारती ।  
 कहै 'पदमाकर' चहौँ जौ वरदान तौ लौँ,  
 कैयो वरदानन के गान अनुसारती ।  
 जौ लौँ लगौँ काह सों कहन कला एक तौ लौँ,  
 कैयो लच्छ कला के समूहन सँभारती ।  
 जौ लौँ एक तारे को हौँ रचत कवित्त गंगे,  
 तौ लौँ तुम केतिक करोरि तारि डारती ॥

जमाति—समूह । राकापति—महादेवजी ।

( २३ )

जम को न जोर जब पापिन पै चल्यो तब,  
 हाथ जोरि गंगा जू सों चुगली करैं खरे ।  
 बड़ेन पै ढरौ पै ना ढरौ देखि तुच्छन पै;  
 कहै 'पदमाकर' सुनावत हरे-हरे ।  
 बड़ेन पै ढरे बड़ी पाइये बड़ाई देखौ,  
 ईस पै ढरीं तो तुम्हैं ईस सीस पै ढरें ।  
 तुच्छन को देतीं जैसो नारायन रूप तैसो,  
 तुच्छ तुम्हैं तुच्छ करि पापन तरे धरे ॥

( २४ )

गंगा जू तिहारे तोर आछी भाँति 'पद्माकर',  
 देखो एक पातकी की अद्भुत गति है ।  
 आइ कै गोविन्द बाँह धारि कै गरुड़जी पै,  
 आपने है लोक जाइवे की कीन्हीं मति है ।  
 जौ लों चलिवे को भये गाफिल गोविन्द तौ लौं,  
 चोरि चतुरानन चलाई हंस गति है ।  
 जौ लौं चतुरानन चितैवे चारों ओर तौ लौं,  
 वृष पै चढ़ाइ लै गयोई वृषपति हैं ॥

---

अद्भुत गति—अपूर्व दशा । आपनेई लोक—वैकुण्ठ । गाफिल—  
 सुस्ती । मति है—विचार । वृषपति—महादेव ।



( २५ )

पापन की पाँति महामंद मुख मैली भई,  
 दीपति दुचंद फैली धरम-समाज की ।  
 कहै 'पद्माकर' त्यों रोगन की राह परी,  
 दाह परी दुःखन में गाह अति गाज की ।  
 जा दिन ते भूमि माहिं भागीरथ आनी जग,  
 जानी गंगधारा या अपारा सब काज की ।  
 ता दिन तें जानी-सी बिकानी बिलसानी-सी,  
 बिलानी सी दिखानी राजधानी जमराज की ॥

( २६ )

बिन जप जज्ञ दान तीछन तपस्या ध्यान  
 चाहत हौ जो पै तिहूँ लोक में महा उदेत ।  
 कहै 'पद्माकर' सुनौ तौ हाल हामी भरौ,  
 लिखौ कहाँ लैके कहूँ कागद-कलम-देत ।  
 गंगा जू के नाम सुने हामी भरे लिखे कहे,  
 ऐसे चढ़ि जात कछु पुन्यन के पूरे गोत ।  
 सौ गुने सुने तें औ हजार गुने हामी भरे,  
 लाख गुने लिखत करोरि गुने कहे होत ॥

---

पाँति—समूह । तीछन—उग्र । बिलानी—नष्ट हो गयी । उदेत—  
 प्रगट । देत—दावात । गोत—समूह ।

( २७ )

जम के जसूस विनै जम सों हमेस करें,  
 तेरी ठाकुरी को ठीक नेकु न निहारो है ।  
 बड़े बड़े पापी औ सुरापी द्विज तापी तहाँ,  
 चलन न पावें कहूँ हुकुम हमारौ है ।  
 कहै 'पदमाकर' सुब्रम्हलोक विस्नुलोक,  
 नाम लैकै कोऊ सिवलोक को सिधारौ है ।  
 बैठी सीससंगा के तरंगा है अभंगा ऐसी,  
 गंगा ने उठाइ दीन्हों अमल तिहारौ हैं ॥

( २८ )

परो एक पतित पराउ तीर गंगा जू के,  
 कुटिल कृतघ्नी कोढ़ी कुंठित कुढंगी अंध ।  
 कहै 'पदमाकर' कहौ मैं कौन वाकी दसा,  
 कीट परि गये तन आवै महा दुरगंध ।  
 पाप हाल छूटि गे सु लूटि गे विपतिजाल,  
 टूटि गे तड़ाक दे सुनाय लेत भवबंध ।  
 गं कहे गनेश-वेस दौरि गही बाँह अरु,  
 गा के कहे गरुड़ चढ़ाइ लीन्हों निज कंध ॥

---

सुरापी—शराधी । अमल—अधिकार । कीट—कोड़े ।



( २९ )

विघन विनास भव पास होत नासै भासै,  
 नासै पुन्य पुंज को प्रकासै रंग रंगा के ।  
 सुख की समाजै उपराजै साज छाजै छिति,  
 वन सी गराजै राजै सीस ईस नंगा के ।  
 कहै 'पदमाकर' सुजानै करि ज्ञानै जानै,  
 तानै मन मानै भोग आनै देव अंगा के ।  
 तहाँ आइ भूमि तें लगाइ आसमानहू लौं,  
 अव-ओघ-भंगा ये तरंग देखि गंगा के ॥

( ३० )

गंगा जी के नीर तीर छोड़ि हैं सरीर जिन,  
 तेऊ गने जात पुन्य वंतन की धुर हैं ।  
 कहै 'पद्माकर' त्यों तिनकी जलूसैं लखि,  
 गीरवान सकल सराहैं जुर-जुर हैं ।  
 सारथी गोविन्द दीपदानवारे भानु होत,  
 पंखवारे भारे पाक-सासन से सुर हैं ।  
 खौरवारे वरुन तमोरवारे तारापति,  
 चौरवारे चारु चतुरानन चतुर हैं ॥

---

उपराजै—पैदा करै । ईसनंगा के—शंकर भगवान । धुर—आने ।  
 गी रवान—सरस्वती । सराहैं—प्रशंसा करै । तारापति—चन्द्रमा ।

( ३१ )

तहाँ आइ भूमि तें लगाइ आसमान हूँ लौं,  
 जानि गिरवान और विमानन के जुरे थोक ।  
 कहै 'पदमाकर' जो कोऊ नर जैसे तैसे,  
 तन देत गंगा तीर तजि कै महान सोक ।  
 सो तौ देत व्याधे विष दुःखन दिनाई देत,  
 पापन के पुंज के पहारन को ठोक ठोक ।  
 दगा देत दूत चुनौती चित्रगुप्त देत,  
 जम को जरब देत पापी लेत सिवलोक ।

( ३२ )

एक महा पातकी सुगात की दसा बिलोकि,  
 देत यों उराहने सु आठ हूँ पहर है ।  
 मीच समै तेरे उन आप गये कंठ इत  
 व्यापि गयो कंठ कालकूट-सो जहर है ।  
 आप चढ़ी सीस मोहि दीन्हों बकसीस,  
 औ हजार सीस वारे की लगाई अटहर है ।  
 मोहि करि नंगा अंग अंगनि भुजंगा बाँधो,  
 एरी मेरी गंगा तेरी अदभुत लहर है ।

थोक—समूह । चुनौती—प्रचारण । हजार सीस वारे की—शेषनाग ।



## गङ्गा लहरी

१७

( ३३ )

सुखद सुहाई मन भाई मुनि देवन के,  
 निखिल निकार्ई रूप वेदन में गाई है ।  
 कहै 'पदमाकर' कहाँ लौं साधुताई कहौं,  
 सबही पै एकसी दया सी बगराई है ।  
 पुन्यताई धारत उधारत अधमताई,  
 नीक ठकुराई की ठसक ठहराई है ।  
 जहाँ जहाँ जम की जमाति कीन्हीं करामाति,  
 वहाँ-नहाँ फिरै देखि गंगा की दुहाई है ॥

( ३४ )

कीजतु फिराद सुनि लीजिये हमारी गंगा,  
 साखन के साथी दुःख दिग्गज डिगाये तू ।  
 कहै 'पदमाकर' जु जान तन कोऊ दूजो,  
 तीन जस जगा जगा जगदुमगाये तू ।  
 आये हुतो हौं तो कछु लीबे को तिहारे पास,  
 जनम के जेरे मेरे पातक हिराये तू ।  
 छोड़ि छोड़ि तत्र तन सोये ते गरीब जे वै,  
 ते वै पूरे-पूरे पुन्य पटल जगाये तू ॥

बगराई— फैला दी । दुःखदिग्गज—महान कष्ट ।

( ३५ )

सरद-घटा-सी खासी उठती अटा सी,  
 दुपटा-सी छिति छीरधि-छटा सी निरधारिये ।  
 लज्जासी छुटी सी छ्वार द्वारीसी गढ़ी सो गढ़,  
 मठ सी मढ़ी सी औ गढ़ी के ढार ढारिये ।  
 कहै 'पदमाकर' सु-धौरी धौरी दौरी आवै,  
 चौरी चौरी चंचल सुचारु चिन्हवारिये ।  
 हरे-हरे छवि नई-नई न्यारी-न्यारी नित,  
 लहरैं निहारि प्यारी गंगा जू तिहारिये ।

( ३६ )

मुनि मनमाने सदमाने सारदादि बंदि,  
 नारदादि जाने जे बखानि वेदवानी के ।  
 आप अविनासी हैं विनासी दुःख जालन के,  
 पुन्य के प्रकासी प्रन पूरक सुप्रानी के ।  
 कहै 'पदमाकर' सुपाप तम पूषन हैं,  
 दूषन रहित भव भूषन महानी के ।  
 ध्यावौ अब ध्यावौ लोक पावौ देव देवन के,  
 गावौ अरे गावौ गुन गंगा महारानी के ।

---

छीरधि—क्षीर समुद्र । हरे-हरे—धीरे धीरे ।



## गङ्गा लहरी

१९

( ३७ )

हेरि हेरि हँसत न चाहत हरषि चढ्यो,  
 बैलइ बिलोकि मन वाकी ओर टरको ।  
 कहै 'पदमाकर' सु देखि कै गरुड़हू को,  
 लेखि निज भाग अनुरागि कैन सरको ।  
 कापै चढ़ौ काह तजौ चाहत सबन यह,  
 सोचत पतित परचो गंगा तीर पर को ।  
 जौलौ घरी द्वैक रूप हर को न पायो तौलौ,  
 पातकी बिचारौ भयो चोर भरे घर को ॥

( ३८ )

लाई भूमि लोक ते जसूस जवरई जाइ,  
 जाहिर खबर करी पापिन के मित्र की ।  
 कहै 'पदमाकर' बिलोकि जम कही कै ।  
 बिचारौ तौ करम गति ऐसे अपवित्र की ।  
 जौलौ लगे कागद बिचारन कछुक तौ लौ,  
 ताके कान परी धुनि गंगा के चरित्र की ।  
 वाके सीस ही तें ऐसी गंगा धार बही जामें,  
 बही बही फिरी बही चित्र और गुपित्र की ॥

जवरई—बरबश । करमगति—भाग्य रेखा । बही बही फिरी—  
 तैरती फिरती था । बही—लेखा की किताब ।

( ३९ )

वाको जस कितहूँ न जाग्यो परतच्छ पई,  
 याको धाम-धाम फैलि फैलि रह्यो जस है ।  
 वाको सुन्यो एक देवलोक में दरस होत,  
 याको तौ दिखात तिहूँ लोक में दरस है ।  
 कहै 'पद्माकर' मुदान वह माँगे देत,  
 ये तो विन मागे सब देत सरवस है ।  
 आछो अभिराम कहै पूरन सकल काम,  
 गंगा जू कौ नाम काम तरु ते सरस है ॥

( ४० )

मुरसरि मैया एक पातकी पुकार्यो तोहिं,  
 ऐसो दिव्य दीन्हों तप तेज वोहि तैने है ।  
 कहै 'पद्माकर' स्वलोक तिहि आगे रखि,  
 करत प्रणाम मुर वृंद सब नै नै है ।  
 व्याकुल विलोक वह बोल्यो देवि देवन सों,  
 कोऊ न डेराहु तुम्हें आर कछु देने है ।  
 इन्द्र सों कहत मोहि लैनै है न इन्द्र लोक,  
 समुलोक लैनै कै गोविन्द लोक लैन है ॥

---

अभिराम—सुन्दर । नै नै—भुक्त कर ।



## गङ्गा लहरी

२१

( ४१ )

सार माला सत्य की विचार माला वेदन की,  
 भारी भाग माला है भगीरथ नरेस की ।  
 तप माला जन्हु की सुजप माला जंगिन की,  
 आञ्छी आप माला या अनादि ब्रम्ह वेस की ।  
 कहै 'पदमाकर' प्रमान माला पुन्यन की,  
 गंगा जू की धारा धन माला है वनेस की ।  
 ज्ञान माला गुरु की गुमान माला ज्ञानिन की,  
 ध्यान माला ध्रुव की मौलि माला है महेस की ॥

( ४२ )

ज्ञानन में ध्यानन में निगम निदानन में,  
 मिलत न क्यों हूँ हरि ही में ध्याइयतु है ।  
 कहै 'पदमाकर' न तच्छन प्रतच्छ होत,  
 अच्छन के आगे हूँ अधिच्छ गाइयतु है ।  
 इन्दिरा के मंदिर में सुनिये अनंद भरे,  
 बीधे भव फंद तहाँ कैसे जाइयतु है ।  
 वेदन के वृंद में न पैये क्षीर सिन्धु में,  
 सु गंगा जल बिन्दु में गुविन्द पाइयतु है ॥

---

इन्दिरा के मंदिर में—लक्ष्मी के घर में । बीधे भव फंद—विधाता के सांसारिक जाल ।

( ४३ )

गाँउँ गजवाजि दै दराज कविराजन,  
 पटैल को पराभव फतूहन फलै गये ।  
 कहै 'पदमाकर' अमैदे राज-रख्यत को,  
 मंत्रिन को मंत्र दै न काहूँ सों छलै गये ।  
 साहिब सवाई सुव संपनि समाज साज,  
 जगत नरिदै निज नंदै दै भले गये ।  
 वास वयकुरठ करिवे कों श्री प्राताप पाक,  
 सासन के आसन पै पाँव दै चलै गये ॥

( ४४ )

पक्के पिजरान ही तें खोलत खुले परत,  
 बोलत सो बोल वजै दुंदुभी से दै रहे हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' चमोटन करि चोचन की;  
 चूकत न चोट चटकीले अंग वै रहैं ।  
 तेते तंग तीरु तयार नृप कूरम के,  
 लै लै फर्र फर्र के फतूहन फवै रहैं ।  
 वासा को गनै न कछु जंग जुरै जुरन सों,  
 बाजी बाजी बेर बाजी बाजहूँ सों लै रहे ॥



## प्रबोध पचासा

( ४५ )

देव नर किन्नर कितेक गुन गावत पै,  
पावत न पार जा अनत गुन पूरे को ।  
कहै 'पदमाकर' सुगाल के बजावत ही,  
काज करि देत जन जाचक जरूरे को ।  
चंद की छटान युत पन्नग-फटान-युत,  
मुकुट विराजै जटा जूटन के जूरे को ।  
देखै त्रिपुरारि की उदारता अपार जहाँ,  
पैये फल चारि फूल एक दे धतूरे को ॥

( ४६ )

आनन्द के कंद जग ज्यावत जगत वृंद,  
दशरथ नंद के निबाहेई निबहिये ।  
कहै 'पदमाकर' पवित्र पन पालिबे कों,  
चोरै चक्रपानि के चरित्रन को चाहिये ॥  
अवधविहारी के विनोदन में वीधि बीधि,  
गीध गुह गीधे के गुनानुवाद गहिये ।  
रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,  
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये ॥

चक्रपानि—भगवान् कृष्ण ।

( ४७ )

आवत हूँ जात खात खेलत खुलत गात,  
 छीकत छकात चुपचाप हूँ न रहिये ।  
 कहै 'पदमाकर' परेहूँ परभात प्रेम,  
 पागत परात परमातमा न जहिये ।  
 बैठत उठत जात जागत जँभात मुख,  
 सोवतहूँ सापने न औरे नाथ न हिये ।  
 रैन दिन आठों याम राम राम राम राम,  
 सीताराम सीताराम सीताराम कहिये ॥

( ४८ )

आयो मन हाथ तब आइवो रह्यो न कछु,  
 भायो गुरु ज्ञान फेरी भाइवो कहा रह्यो ।  
 कहै 'पदमाकर' सुगंध की तरंग जैसे,  
 पायो सतसंग फेरि पाइवो कहा रह्यो ।  
 दान बल वानवल विविध वितान बल,  
 छायो जस पुंज फेरि छाइवो कहा रह्यो ।  
 ध्यायो राम रूप तब ध्याइवो कछू न रह्यो,  
 गायो राम नाम तब गाइवो कहा रह्यो ॥

न और नाथ नहिये—दूसरा काम न करिये । जस पुंज—कीर्ति  
 कलाप ।



( ४९ )

आस बस वास बस विविध विलास बसु,  
 वासना बढी को सुर-वासना लौं हरिहौ ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों अधम अजामिल लौं,  
 औगुन हमारे गुन मानिही तौ धरिहौ ।  
 गुह पर गीधपर गनिका गयंद पर,  
 जाही ढार ढरै तवै ताही ढार ढरिहौ ।  
 ह्वै रहौ तिहारे चरनन ही को चेरो कहूँ,  
 ऐसो मन मेरो कव रामनाम करिहौ ॥

( ५० )

औगुन अनंत खरदूषन लौं दोषवंत,  
 तुच्छ तिसरा लौं जाको एक हू न जस है ।  
 कहै 'पदपाकर' कवध लौं मदंध महा,  
 पापी हौं मरीच लौं न दाया को दरस है ।  
 मंथर लौं मथर कुपंथी पंथ पाहन लौं,  
 वालिही लौं विषई न जान्यौ और रस है ।  
 व्याधहू लौं बधिक विराध लौं विरोधी राम,  
 एते पै न तारौ तौ हमारौ कहा बस है ॥

ताही ढार ढरिहौ—उसी ढंग से चलिये । पाहन—पत्थर ।  
 विषई—कामी ।

( ५१ )

उकुति अनेक ही पै एक हू कही न परै,  
 टेक ही हमारी केकही हू ते सठिन है ।  
 कहैं 'पदमाकर' न छाया है छमा की ऐसी,  
 काया कलि कोह मोह माया की मठिन है ।  
 या तें गुह गीध लौं सुविधियो न मोसों राम,  
 मेरी गति घोर या कठोर कमठिन है ।  
 लंक गढ़ तोरिबे तें रावन ते रोरिबे तें,  
 मोहि भवबंधन में छोरिबो कठिन है ॥

( ५२ )

व्याध हू तें विहद असाधु हौं अजामिल तें,  
 ग्राहतें गुनाही कहौ तिनमें गनाओगे ।  
 स्यौरी हौं न सुद्र हौं न केवट कहूँ कौ त्यों न,  
 गोतम तिया हौं जापै पग धरि आओगे ।  
 राम सों कहत 'पद्माकर' पुकारि तुम,  
 मेरे महा पापन को पार हू न पावोगे ।  
 सीता सी सती को तज्यो झूठोई कलक सुनि,  
 साँचेई कलंकी ताहि कैसे अपनवोगे ॥

क्राह—क्रोध । कमठिन—कछुई । कलंक—अयश ।



## प्रबोध पचासा

२७

( ५३ )

ए रे जड़ जीव जानि राखु वेद-भेद यहै,  
 सुमृत पुराण राखी यहै ठहराय है ।  
 कहै 'पदमाकर' सु माया—पर पंचन को,  
 पेखि परपंच पेखने को सब भाय है ।  
 या ते भजु दशरथ नंद रामचंद्र जू को,  
 आनंद को कंद कोसलेस रघुराय है ।  
 जा दिन परेगो काम जम के जसूसन सो,  
 ता दिना तिहारो काम राम नाम आय है ॥

( ५४ )

कुटिल कुबुद्धि कुल कायर कलंकी सुद,  
 निपट असुद्ध तेज हरषत ह्यौ परै ।  
 कहै 'पदमाकर' विरोध अवरोध-बस,  
 क्रोध बस है कै कहूँ काहूँ सो न त्यों परै ।  
 औरन उदास करि पाँचन निरास करि,  
 त्रास जम जातना को ल्याबंत न ज्यों परै ।  
 अधम उधारन हमारे रामचंद्र तुम,  
 साँचे बिरदैव या तें काँचे हम क्यों परै ॥

जम के जसूसन—यमदूत । त्रास—भय । जम जातना—यमराज  
 प्रदत्त दारुण क्लेश । बिरदैव—यशस्वी । काँचे—निर्बल, हताश ।

( ५५ )

जोग जप संध्या साधु साधन सबैई तजे,  
 कीन्हें अपराध ते अगाध मन भावते ।  
 तेते तजि औगुन अनत 'पदमाकर' तौ,  
 कौन गुन लै कै महाराजहि रिझावते ।  
 जैसे अब तैसे पै तिहारे बड़े काम के हैं,  
 नाहीं तौ न एते बैन कबहु सुनावते ।  
 पावते न मो-सो जो पै अधम कहूँ तो राम,  
 कैसे तुम अधम उधारन कहावते ॥

( ५६ )

एकन सो बैर करि प्रीति करि एकन सो,  
 एकन सो बैर है न प्रीति कछु गाढ़ी है ।  
 कहै 'पद्माकर' न होत चित चाही बात,  
 बात करिवे को अनचाही मीच डाढ़ी है ।  
 एते पै न चेत फेरि केते बाँध बाँधत है,  
 दंत लागे हिलन सपेद भई दाढ़ी है ।  
 बाढ़ी कहूँ भगति न राम की हिये में देखौ,  
 तृसना विसासनि या बिलई ते बाढ़ी है ॥

साधु साधन—अच्छे कार्य्य । अगाध—बहुत से । मन भावते—  
 जी भर कर । अधम उधारन—पापियों को उधारने वाले । केते बाँध  
 बाँधत है—न जाने कितने मन्सूवे करते हैं । विसासनि—विश्वास  
 वातनी ।



( ५७ )

हानि अरु लाभ ज्यान जीवन अजीवन हू,  
 भोग हू वियोग हू संयोग हू अपार है ।  
 कहै 'पदमाकर' इते पै और केते कहौ,  
 तिनको लख्यो न वेद हू में निरधार है ।  
 जानियत यातें रघुराय की कला को कहूँ,  
 काहू पार पायो कोऊ पावत न पार है ।  
 कौन दिन कौन छिन कौन घरी कौन टौर,  
 कौन जाने कौन को कहाँ धौं होनहार है ॥

( ५८ )

प्रलै के पयोनिधि लौं लहरैं उठन लागीं,  
 लहरा लग्यो त्यों होन पौन पुरवैया को ।  
 भीर भरी भाँभरी विलोकि मझधार परी,  
 धीर न धरात 'पदमाकर' खेवैया को ।  
 कहा वार कहा पार जानी है न जात कछु,  
 दूसरो दिखात न रखैया और नैया को ।  
 वहन न पैहै घेरि घाटहि लगै है ऐसो,  
 अमित भरोसो मोहि मेरे रघुरैया को ॥

---

निरधार—जिसका कोई सहारा न हो । पयोनिधि—समुद्र ।  
 पौन—हवा ।

( ५९ )

अपने पराये ते सोहाये भोग बिजन तें,  
 तोही को जिमाये तातें रसना पतीजियो ।  
 कहै 'पदमाकर' ज्यों तेरियै कही मैं करी,  
 मेरी कही एक दिना एती मान लीजियो ।  
 आपनोयै जानि के जवान तो सों जाँचत हौं,  
 बोलत बिलंब एक छिन को न कीजियो ।  
 जंगी जमराज के जसूसन सों काम परे,  
 रामई को नाम तू हरेई कहि दौजियो ॥

( ६० )

आस बस डोलत सुया के विसवास कहा,  
 सास बस बोलै मल मास ही को गोला है ।  
 कहै 'पदमाकर' विचार छन भंगुर या,  
 पानी को सो फेन जैमे फलक फफोला है ।  
 करम करोरा पंच तत्वन बटोरा फेरि,  
 ठौर ठौर जोला फेरि ठौर ठौर पोला है ।  
 छोड़ हरि नाम नहि पैहै विसराम अरे,  
 निपट निकाम तन चाम ही को चोला है ॥

बिलंब—देर । छन भंगुर—थाड़ी ही देर में नष्ट होने वाली ।  
 निपट निकाम—बिल्कुल बेकार ; चामही को चोला है—चमड़े का शरीर ।

Sri Pratap Singh

Library



( ६१ )

गोदावरी गोकरन गंगा हू गया हू यह,  
 येही कोटि तीरथ किये को लाभ लहिये ।  
 कहै 'पदमाकर' सुज्ञान यहै ध्यान यहै,  
 यहै सुख खान सरवस्व मानि रहिये ।  
 एही जप एही तप एही जोग जज्ञ यहै,  
 ए ही भव रोग को उपाव एक चाहिये ।  
 रैन दिन आठो जाम राम राम राम राम,  
 सीताराम सीताराम सीताराम कहिये ॥

( ६२ )

जाट हू धना के सदन के सुद्ध साथी भये,  
 हाथी हू उबारत न बार मन लाये रहैं ।  
 कहै 'पदमाकर' कहे न परैं तेते जग,  
 जेते कपि रिच्छन के बिरद बढ़ाये हैं ।  
 साधन के हेत पन पाल्यो प्रह्लाद हू को,  
 याद करौ जाय सेवरी के बेर खाये हैं ।  
 राखत हैं राखैंगे रखैया रघुनाथ जन,  
 आपने की बात सदा राखतेई आये हैं ।

---

भवरोग का उपाव—संसार सागर से निस्तार करने का साधन ।

( ६३ )

आवत गलानि जो बखान करौ ज्यादा यह,  
 काया मल मूत्र और मज्जा की सलीती है ।  
 कहै 'पद्माकर' जरा भी जागि भीजी तब,  
 छोड़ी दिन रैन जैसे रेनु ही की भीती है ।  
 सीतापति राम के सनेह वश वीरता जी पै,  
 तौ तो दिव्यदेह जम जातना ते जीतो है ।  
 रोती राम नाम ते रही जो बिन काम तौ या,  
 खारिज खराब हाल खाल की खलीती है ॥

( ६४ )

देखौ दिच्छ दिच्छन प्रनच्छ निज पच्छिन के,  
 लच्छन समच्छ भय भच्छिवो करत है ।  
 कहै 'पद्माकर' निपच्छन के पच्छ हित,  
 पच्छ तजि लच्छि तजि गच्छिवो करत है ।  
 लच्छिवो करत जस पच्छिवो करत जन;  
 आपने को राम सदा रच्छिवो करत हैं ।  
 सुद्ध सह सच्छ के विपच्छिन के धच्छिवे को,  
 मच्छ कच्छ आदि कला काच्छिवो करत है ॥

गलानि—घृणा । सलीती—थैली । छोड़ी—नष्ट हुई । भीती—  
 दिवाल । रच्छिवो—रक्षा करना ।



( ६५ )

साप हर पाप हर कलि के कलाप हर,  
 तीखन त्रिताप हर तारक तरैया को ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों प्रगट प्रकाश मान,  
 पोषक पियूष ऐसो जैसो कामगैया को ।  
 सुख सुलदायक सहायक सबन सूधो,  
 सुलभ सरन्य सरनागत अत्रैया को ।  
 नीठो भर कठवति परत न फीको नित,  
 नीको निरदोष नाम राम रघुरैया को ॥

( ६६ )

काहे को बधम्बर को ओढ़ि करु अडम्बर,  
 काहे को दिगंबर हूँ दूब खाय रहिये ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों काय के कलेस नित,  
 सीकर समीत सीत बात ताप सहिये ।  
 काहे को जपोगे जप काहे को तपोगे तप,  
 काहे को प्रपंच पंच पावक में दहिये ।  
 रैन दिन आठों जाम राम राम राम राम,  
 सीताराम सीताराम सीताराम कहिये ॥

तीखन—दारुण । त्रिताप हर—देहिक दैवक और भौतिक कष्ट  
 पियूष—अमृत । काम गैया—कामधेनु । दिगम्बर—भगवान शंकर  
 का नाम । पंच पावक में दहिये—पंचाग्नि तापना ।

( ६७ )

काम बस सूपनखा नाम गनिका सी तरी,  
 क्रोध बस रावन तरचो जे लंक राखेई ।  
 कहै 'पदमाकर' विमोह बस बिप्र तरचौ,  
 लोभ बस लुब्धक तरचौ जेवान बाखेई ।  
 औरे गोध गुह आष आह हैं न गाये परैं,  
 तेते तरि-तरि गे न केते काछ काखेई ।  
 या तें विधि कौन हूँ कहू जो रघुराज ही के,  
 पाखेई परौगे तो तरौगे यार आखेई ॥

( ६८ )

रिच्छन के वृन्द बली वन्दर बिलंद तरि,  
 मोटे मोद-मंदिर मे सुजस ललाम के ।  
 कहै 'पदमाकर' सिला हू तरि सौरी तरि,  
 पाये पद पंकज पराग अभिराम के ।  
 गुह तरि गोध तरि गनिका गयंद तरि,  
 केते तरि तरि मे निवासी निज धाम के ।  
 भारे भव सिन्धु में उतारे दैन वारे अबै,  
 संभु के सँभारे हैं वरन रामनाम के ॥

---

लुब्धक—बर्हेलिया । वरन—अक्षर ।



( ६२ )

थंभन में थाँम—सो सुठाम सो सुदंभन में,  
 दीपक ललाम-सो अँधेरे-से दिगंत में ।  
 कहै 'पदमाकर' गयल में विश्राम-सो,  
 सरोजन की दाम सो जो सरद समंत में ।  
 सीतापति राम को सुनाम एक ऐस ही है,  
 आनँद के आम सो सु लागत बसंत में ।  
 पावस में धाम-सो सु ग्रीषम में सीत ऐसी,  
 सीतपरे घाम सौ हिमाम सौ हिमंत में ।

( ७० )

संभु ते न सूँधा डरै दूरि दुरगा तें रहै,  
 जाहि न तृषा है गहि गंगाजल पान की ।  
 कहै 'पदमाकर' सुनी ना सठ सापनेहू,  
 भाखी बालमीकि जो कथा है भगवान की ।  
 सीतापति चरन सरोज ते बिमुख मुख,  
 चाहत इते पै माटी गाँठी अभिमान को ।  
 जैसे नरमूढ़ गाजरन की तुला पै चढ़ि,  
 आनन उठाय बाट हेरत विमान की ॥

सरोजन की दाम—कमल की माला । विमुख—विपरीत ।  
 बाट हेरत—रास्ता देखता है ।

( ७१ )

भाये 'पदमाकर' न तैसे भाग जज्ञन के,  
 जैसे भगवाने भीलिनी के फल भाये हैं ।  
 भोजन की सामा सत्यभामा की भुलाई भले,  
 दुखी व सुदामा के सु चाउर चबाये हैं ।  
 छप्पन सुभोग दुर्योधन के त्यागि करि,  
 आसा गहि बेग ते विदुर घर आये हैं ।  
 धारा धाये फिरत वृथा पै नेम नीरधि में,  
 पाये जिन राम तिन प्रेम ही सों पाये हैं ॥

( ७२ )

सुखद सुकंठ सखा साहिव सरन्य सुचि,  
 सूधे सत्यसंध के प्रबंधन को कहिये ।  
 कहै 'पदमाकर' कलेशहर कोसलेश,  
 कामद कबंध-रिपु ही को लैं उमहिये ।  
 राजिवनयन रघुराज राजा राजाधिप,  
 रूप-रतनागर को राजी राखि रहिये ।  
 रैन दिन आठों जाम राम राम राम राम,  
 सीताराम सीताराम सीताराम कहिये ॥

---

भाये—अच्छे लगे । सामा—सामान । नेम नीरधि—नियम  
 रूपी समुद्र । सुखद सुकंठ सखा—सुख देने वाले सुग्रीव के मित्र ।  
 सत्य संध—सत्य प्रतिज्ञ । राजिवनयन—कमल लोचन ।



( ७३ )

कीन्हीं तुम सेत मैं असेत कृत कीन्हीं तुम,  
 धर्म अनुराग्यौ मैं अधर्म अनुराग्यौ है ।  
 कहै 'पदमाकर' अखाँग्यो तुम लंकपति,  
 हमहूँ कलंकपति हूँ वोई अखाँग्यो है ।  
 हम तुमहूँते अति करम-करैया बड़े  
 अंकनि गने पै यों गुमान जिय जाग्यौ है ।  
 खीझियो न मो पै मुख लागत भले ही राम,  
 नाम ही तिहारो जो हमारे मुख लाग्यो है ।

( ७४ )

जा दिन जनम देत ता दिन ते आगे करै,  
 पय को प्रसव जोग जीवन के हेत है ।  
 कहै 'पदमाकर' अमीर उमराव वाके,  
 एक ही से गरबी गरीब स्यामसेत है ।  
 हम करतूती बड़े किस्मती कहाये जो या,  
 भाषन भरम सो तौ अधिक अचेत है ।  
 ज्ञान करि देखौ भय काहे को अजान राम,  
 करुना निधान सो निदान सुधि लेत है ॥

---

अखाँग्यो—मार डाला । गुमान—अभिमान । पय को प्रसव—  
 दूध का उपन्न करना । किस्मती—भाग्यशाली ।

## फुटकल

( ५५ )

आई खेलि होरी घरै नवल किशोरी कहैं,  
 बोरी गई रंग में सुगंधनि भुकोरै है ।  
 कहै पदमाकर हकंत चलि चौकी चढ़ि,  
 हारन के वारन ते फंद वंद छोरै है ।  
 घाँघरे की घूमनि सु ऊरुन दुबीचे दावि,  
 आँगीहू उतारि सुकुमारि मुख मोरै है ।  
 दंतनि अधर दावि दूनरि भई सी चापि,  
 चौवर पचौवर कै चूनरि निचोरै है ॥

( ७६ )

छत्रिन के छत्र छत्रधारनि के छत्रपति,  
 छाजत छटानि छिति छेम के छवैया हो ।  
 कहै 'पदमाकर' प्रभाव के प्रभाकर,  
 दया के दरिआव हिंद हृद के रखैया हो ।  
 जागतैं जगतसिंह साहेव सवाई,  
 श्री प्रताप नृपनंद कुलचचंद के रखैया हो ।  
 आछे रहो राजराज राजन के महाराज,  
 कच्छ कुल कलस हमारे तो कन्हैया हो ॥

ऊ६न—जंघा । अधर—ओँठ । प्रभाकर—सूर्य । छिति—पृथ्वी ।



( ७७ )

आप जगदीश्वर है जग में विराजमान,  
 हौं हूँ तो कवीश्वर है राजतै रहत हौं ।  
 कहै पदमाकर ज्यों जोरत सुजस आप,  
 हौं हूँ त्यों तिहारो जस जोरि उमहत हौं ।  
 श्री जगतसिंह महाराज मानसिंहावत,  
 बात यह साँची कछु काँची ना कहत हौं ।  
 आप ज्यों चहत मेरी कवितादराज,  
 त्यों मैं उमिरि-दराज राज रावरी चहत हौं ॥

( ७८ )

सोभित स्वकीया गन गुन गनती में तहाँ,  
 तेरे नाम की ही एक रेखा रेखियतु है ।  
 कहै पदमाकर पगी यों पति प्रेम ही में,  
 पदमिनी तोसी तिया तू ही पेखियतु है ॥  
 सुवरन रूप जैसा तैसा सील सौरभ है,  
 याही तें तिहारौ तन धन्य लेखियतु है ।  
 सोने में सुगंध न सुगंध में सुन्यौ री सोनो,  
 सोनो औ सुगंध तोमे दोनों देखियतु है ॥

---

उमरि दराज—दीर्घायु । स्वकीया—विवाहिता स्त्री ।

( ७९ )

पीतम के संग ही उमगि उड़ि जैवे कों,  
 न ऐती अंग अंगनि परंद पखियाँ दर्ई ।  
 कहै 'पदमाकर जे आरती उतारैं चौर,  
 ढारैं श्रमहारैं पैन ऐसी सखियाँ दर्ई ।  
 देखि दृग द्वै हीसों न नेकुहीं अवैये इन,  
 ऐसे झुकाझुक में झपाक झँखिया दर्ई ।  
 कीजे कहा राम स्याम आनन विलोकिये कों,  
 विरचि विरंचि न अनंत अँखियाँ दर्ई ॥

( ८० )

'ए बलि कहौ हो किन' ? 'का कहत कंत' ? अरी,  
 रोष तजि रोष कै कियो मैं का अचाहे को !  
 कहै 'पदमाकर यहै तौ दुखदूरि करौ,  
 दोष न कछु है तुम्हें नेह निरबाहे को ।  
 'तो पै इत रोवति कहा हौ, 'कहौ कौन आगे,  
 'मेरे ई जू आगे किये आँसुन उमाहे को' ।  
 'को हौ मैं तिहारी' तू तौ मेरी प्रान प्यारी, अजी  
 होती जो पियारी तब रोती कहौ काहे को ॥

परंद—पक्षी । श्रमहारैं—परिश्रम दूर करें । विरंचि—ब्रह्मा ।  
 बलि—बलिहारी । कंत—प्रीतम । उमाहे—उमड़े हुए ।



( ८१ )

जगर मगर दुति दूनी केलि मंदिर में,  
 बगर बगर धूप अगर बरायौ तू ।  
 कहै पदमाकर त्यों चंद ते चटक दारे,  
 चुवन में चारु मुख चंद अनुसारयो तू ।  
 नैनन में वैनन में सखी और सैनन में,  
 जहाँ देखौ तहाँ प्रेम पूरन पसारयो तू ।  
 छपत छपाये तऊ छल न छबीली अब,  
 उर लगिवे की बार हार न उतारयो तू ॥

( ८२ )

रोष करि पकरि परोस ते लियाई घरै,  
 पीको प्रान प्यारी भुजलतनि भरै भरै ।  
 कहै 'पदमाकर' ए ऐसौ दोष कीजै फेरि,  
 सखिन समीप यों सुनावति खरै खरै ।  
 ज्यों छल छिपावै बात हँसि बिहरावै तिय,  
 गदगद कंठ दग आँसुन भरै भरै ।  
 ऐसी धन धन्य धनी धन्य है सु ऐसौ जाहि,  
 फूल की छरी सों खरी मारति हरै हरै ॥

केलि मंदिर—रंग भवन । वैनन—बातचीत । सैनन में—इशारों में ।  
 धन धन्य धनी—पत्नी । हरै हरै—धीरे धीरे ।

( ८३ )

छवि छलकन भरी पीक पलकन त्योंही,  
 श्रमजल कन अलकन अधिकाने ज्वै ।  
 कहै 'पदमाकर सुजान रूपखान तिया,  
 ताकि ताकि रही ताहि आपुहि अजाने ह्वै ।  
 परसत गात मनभावन के भावती की,  
 गई चढ़ि भौहें रहीं ऐसी उपमानें छ्वै ।  
 मानों अरविद पै धंद की चढ़ाइ दीन्हों,  
 मान कमनैत विन रोदा की कमानें द्वै ॥

( ८४ )

दोऊ छवि छाजतीं छवीली मिलि आसन पै,  
 जिनहि विलोकि रह्यौ जात न जितै जितै ।  
 कहै 'पदमाकर' पिछौहें आई आदर सों,  
 छलिया छवीलौ छैल वासर वितै वितै ।  
 मूँदे तहाँ एक अलवेली के अनोखे दृग,  
 सुदृग मिचावनी की के स्थालनि हितै हितै ।  
 नैसुक नवाइ ग्रीवा धन्य धन्य दूसरी को,  
 औचक अचूक मुख चूमत चितै चितै ॥

---

श्रमजल कन—पसीने को बूंद । मनभावन—पति । भावती—पत्नी ।  
 अरविद—कमल । कमनैत—धनुर्धर । मिचावनी—आख मूंदी खेल ।  
 नैसुक—थोड़ा भी ।



( ८५ )

गोकुल के कुल के गली के गोप गाँवन के,  
 जौ लागि कछू को कछू भारत मनै नहीं ।  
 कहै 'पदमाकर' परोस पिछवारनि तें,  
 द्वारन तें दौरि गुन औगुन गनै नहीं ।  
 तौ लौं चलि चतुर सहेली आई कोऊ कहूँ,  
 नीके कै निचोरे ताही मनै करतै नहीं ।  
 हौंतो तो स्याम रंग में चुगाइ चित चोरा चोरी,  
 बोरत तौ बोर्यौ पै निचोरत वनै नहीं ॥

( ८६ )

आली हौं गई ही आज भूलि बरसाने कहूँ,  
 ता पै तू परै है पदमाकर तनैनी क्यों ।  
 ब्रजवनिता वै बनितान पै रची है फाग,  
 तिन में जु ऊधमिनि राधा मृगनैनी यौं ।  
 घोरि डारी केसरि सुवेसरि बिलोरि डारी,  
 बोरि डारी चूनरि चुचात रंग रनी ज्यों ।  
 मोहि भकभोरि डारी कंचुकी मरोरि डारी,  
 तोरि डारी कसनि बिथोरि डारी बैनी त्यों ॥

---

तनैनी—तरेरना । ऊधमिनि—उपद्रव करने वाली । बैनी—जूड़ा ।

( ८७ )

आज तें न जैहैं दधि बेंचन दुहाई खाउँ,  
 भैया की कन्हैया उत ठाढ़ोई रहत है ।  
 कहै पदमाकर त्यों साँकरी गली है अति,  
 इत उत भाजिवे को दाँव ना लहत है ।  
 दौरि दधि दान काज ऐसौ अमनैक तहाँ,  
 आली बनमाली आइ बहियाँ गहत है ।  
 भादौ सुदो चौथ कौ लख्यैरी मृगअंक यातें,  
 भूठ हू कलंक मोहिं लागिबो चहत है ॥

( ८८ )

वृन्दावन वीथिन विनोकन गई ही जहाँ,  
 राजत रसाल बन तालरु तमाल को ।  
 कहै 'पदमाकर' निहारत बन्ध्याई तहाँ,  
 नेहनि को नेह प्रेम अद्भुत ख्याल को ।  
 दूनो दूनो वाढ़त सु पूनो की निसा में अहो,  
 आनंद अनुप रूप काहू ब्रजवाल को ।  
 कुंज तें कहूँ को सुनि कंत को गमन लखि,  
 आगमन तैसो मन मनहरन गोपाल को ॥

---

दुहाई खाउँ—शपथ खाती हूँ । दाँव—अनुकूल अवसर । मृग  
 अंक—चन्द्रमा । अद्भुत ख्याल—अनोखा विचार । कंत—प्रीतम ।



( ८९ )

चालौ सुनि चंद मुखी चित में सुचैन करि,  
 तित बन वागनि घनेरे अलि वृमि रहे ।  
 कहै पदमाकर मयूर मंजु नाचत हैं ।  
 चाह सों चकोरनि चकोर चूमि चूमि रहे ।  
 कदम अनार आम अगर असोक-थोक,  
 लतनि-समेत लोने लोने लागि भूमि रहे ।  
 फूलि रहे फलि रहे फेंलि रहे फबि रहे,  
 भूपि रहे भूलि रहे भुकि रहे भूमि रहे ॥

( ९० )

सूने घर परम परोसी के सुजान तिया,  
 आई सुनि सुनि कै परोसिनि के मनो अराति ।  
 कहै 'पदमाकर' सु कंचन लता सी लचि,  
 ऊँची लेति साँस यों हिये में त्यों नहीं समाति ।  
 जाइ आइ जहाँ तहाँ बैठि उठि जैसे तैसे,  
 दिन तौ बितायै बधू बीतति है कैसे राति ।  
 ताप सरसानी देखें अति अकुलानी जऊ,  
 पति उर आनी तऊ सेज में बिलानी जाति ॥

घनेरे अलि—बहुत से भँवरे । लोने—सुन्दर । फबिरहे—शोभा  
 दे रहे । अराति—शत्रु । तऊ सेज में बिलानी जाति—तिस पर भी  
 शय्या पर सिमटी जाती थी ।

( ९१ )

आरस सों आरत सँभारत न सोस पट,  
 गजव गुजारत गरीबन को धार पर ।  
 कहै 'पदमाकर' सुगंध सरसावै मुचि,  
 बिथुरि बिराजै वार हीरन के हार पर ।  
 छाजति छवीली छित छहरि छरा कौ छोर,  
 भोर उठि आई केलि मंदिर के द्वार पर ।  
 एक पग भीतर सु एक देहरी पै धरे,  
 एक कर कंज एक कर है किवार पर ॥

( ९२ )

'बोलति न काहे' एरी 'पूछे बिन बोलौ कहा',  
 'पूछति हौ कहा भई भेद अधिकाई है' ।  
 कहै 'पदमाकर' सु मारग के गये आये,  
 साँची कहु मोसों कहाँ आज गई आई है ।  
 गई आई है तो साँधरे के पास कौन काज,  
 तेरे काज ल्यावन सु 'तेरी' दुहाई है ।  
 'काहे ते न ल्याई फिरि मोहन बिहारी जू कौ'  
 कैसे बाको ल्याऊँ ? जैसे बाको मन ल्याई है ॥

---

धार—समूह । छरा—शोभा ।



( ९३ )

वैठी परजंक पै नवेली निरसंक जहाँ,  
 जागी जोति जाहिर जवाहिर की जागै ज्यों ।  
 कहै 'पदमाकर' कहूँ ते नंद नंदन हूँ,  
 औचक ही आय अलसाइ प्रेम-पागै यों ।  
 भूपकौहैं पलनि पिया के पीकलीक लखि,  
 भुकि भरराइ ही न नेक अनुरागै त्यों ।  
 वैस ही मयंकमुखी लागत न अंक हुती,  
 देखि कै कलक अब एरी अंक लागै क्यों ॥

( ९४ )

माँगि सिख नौ दिन की न्यौते गे गोविन्द तिय,  
 सो दिन समान छिन मान अकुलावै है ।  
 कहै 'पदमाकर' छपा कर छपाकर तें,  
 बदन छपा कर मलीन मुरझावै है ।  
 वृक्षत जो कोऊ कै कहा री भयौ तोहि तब,  
 और ही को और कछू भेदन बतावै है ।  
 आँसू सकै मोचि न सकौच-बस आलिन में,  
 उलही विरह-बेलि दुलही दुरावै है ॥

---

निरसंक—बेखटके । पलनि—पलक । पीक लीक—पान का ललाई का चिन्ह । छपाकर—चन्द्रमा । वेदन—पीर । दुरातै है—छिपाती है ।

( ९५ )

ऊबत है डूबत है डगत है डोलत है,  
 बोलत न काहे प्रीति रीति न रितै चले ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों उससि उसासन सों,  
 आँसू वै अपार आई आँखिन इतै चले ।  
 औधि ही के आगम लौ रहत वनै तौ रहै,  
 बीच ही क्यों वैरी बंध वेदनि बितै चले ।  
 एरे मेरे प्रान कान्ह प्यारे के चलाचल में,  
 तब तौ चले न अब चाहत कितै चले ॥

( ९६ )

खाये पान-वीरी-सी विलोचन विराजै आज,  
 अंजन अँजाये अधराधर अमी के है ।  
 कहै 'पदमाकर' गुनाकर गुबिंद देखौ,  
 आरसी लै अमल कपोल किन पीके हैं ॥  
 ऐसी अवलोकिवेई लायक मुखारविंद,  
 जाहि लखि चंद अरविन्द होत फीके हैं ।  
 प्रेम रस पागि जागि आये अनुरागि यातें,  
 अब हम जानी कै हमारे भाग नीके हैं ॥

---

औधि ही—निश्चित समय । विलोचन—नेत्र । अंजन अँजाये—  
 काजर लगाये । अवलोकिवेई लायक—देखने योग्य ।



( ९७ )

गोसपेंच कुंडल कलंगी सिर पेंच पेंच,  
 पेंचन तें खैंचिबिन बेंचे वारि' आये है ।  
 कहै 'पदमाकर' कहाँ वा मूरि जीवन की,  
 जाकी पग धूरि पगरी पै पारि आये है ।  
 बे गुन के सार ऐसे बेगुन के हार अब,  
 मेरी मनुहार कौ वृथा ही धारि आये है ।  
 पासा सार खेलि कित कौन मनुहारिन सों,  
 जीति मनुहारि मनुहारि हरि आये है ॥

( ९८ )

लागत बसंत के सु पाती लिखी प्रीतम कों,  
 प्यारी परबीन है हमारी सुधे आनवी ।  
 कहै 'पदमाकर' इहाँ को ये हवाल,  
 विरहानल को ज्वाल सो दवानल तें मानवी ।  
 जब को उसासन को पूरो परगास सो तौ,  
 निपट उसास पौन हू तें पहिचानवी ।  
 नैनन को ढंग सों अंग पिचकारिन तें,  
 गातन को रंग गीरे पातन तें जानवी ॥

वारि आये हौ—न्यौछावर कर आये हो । बे गुन के हार—बिना  
 सूत का हार । मनुहार—बिनती । परबीन—निपुण ।

( ९९ )

ए हो ब्रज ठाकुर उगोरी डारि कीन्हीं तब,  
 वौरी विन काज अब ताकी लाज मरिये ।  
 कहै 'पदमाकर' इते पै यो रंगीलो रूप,  
 देखे विन देखे कहौ कैसे, धीर धरिये ।  
 अंकहू न लागी पै कलंकिनी कहाई या तें,  
 अरज हमारी एक याही अनुसरिये ।  
 सांझ कै सबेरे दिन दसयें दिवारी फाग,  
 कवहूँ भले जू भले आइवो तौ करिये ॥

( १०० )

आलरनदार झुकि झूमत वितान बिछे,  
 गहव गलीचा अरु गुलगुली गिलमैं ।  
 जगर मगर 'पदमाकर' सु दीपन की,  
 फैली जग-ज्योति केलि-मन्दिर अखिल मैं ।  
 आवत तहाँई मनमोहन की लाज मैं,  
 जैसी कछु करी तैसी दिल ही की दिल मैं ।  
 हेरि हरि बिल मैं न लीन्ही हिलमिल मैं,  
 रही हौं हाय मिल मैं प्रभा की झिलमिल मैं ॥

---

अंक हू न लागी—गले से भी न लगी । अनुसरिये—मानिये ।  
 अखिल—समस्त । प्रभा की झिलमिल—प्रकाश का जगमगाहट ।



( १०१ )

ए अलि इकंत पाइ पाइन परे हैं आइ,  
 हौं न तब हेरी या गुमान बजमारे सों ।  
 कहै 'पदमाकर' वै रूठिगे सु ऐसी भई,  
 नैनन तें नींद गई हाय के द्वारे सों ।  
 रैन दिन चैन है न मैन है हमारे वश,  
 ऐन मुख सूखत उसास अनुसारे सों ।  
 प्रानन की हान सी दिखान सी लगी है हाय,  
 कौन गुन जानि मान कीन्हों प्रान प्यारे सों ॥

( १०२ )

पूर असुवान को रखो जो पूरि आँखिन में,  
 चाहत बढ्यौ पै बढि बाहिरै बहै नहीं ।  
 कहै 'पदमाकर' सु धोखेहू तमाल तरु,  
 चाहति गह्यो पै होइ गहब गहै नहीं ।  
 काँपि कदली लौं या अली को अवलंब कहूँ,  
 चाहति लह्यो पै लोक लाजनि लहै नहीं ।  
 कंत न मिले कौ दुख दारुन अनंत पाइ,  
 चाहति कह्यौ पै कछू काहूँ सों कहै नहीं ॥

बजमारे—नष्ट । कदली—केला । अली को अवलंब—सखी का सहारा लेकर ।

( १०३ )

खेल कौ बहानो कै सहेलिन के संग चली,  
 आई केलि मंदिर लौ सुन्दर मजेज पर ।  
 कहै 'पदमाकर' तहाँ न पिय पायौ तिय,  
 त्योंही तनतै रही तमी पति के तेज पर ।  
 चादत बिथा की कथा काहू सों कछू ना कही,  
 लचकि लता लों गई लाजही के लेज पर ।  
 बीरी परी बिथरि कपोल पर पीरी परी,  
 धीरी परी धाड़ गिरी सीरी परी सेज पर ॥

( १०४ )

आई फाग खेलन गुविंद सों अनंद भरी,  
 जाको लसै लंक मंजु मखतूल ताग सो ।  
 कहै 'पदमाकर' तहाँ न ताहि मिल्यो स्याम,  
 छिन में छवीली को अनंग दह्यो दाग सो ।  
 कौन करै होरी कोऊ गोरी समुझावै कहा,  
 नागरी कों राग लग्यौ विष सो विराग सो ।  
 कहर सी केसरि कभूर लग्यौ काल सम,  
 गाज सौ गुलाब लग्यौ अरगजा आग सो ॥

---

सहेलिन—सखियाँ । लंक—कटि । मखतूल ताग—रेशम की डोर ।



( १०५ )

गंजन सु गुंज लग्यो तैसो पौन पुंज लग्यो,  
 दोष मनि कुंज लग्यो गुंजन सो गाजि कै ।  
 कहै 'पदमाकर' न खोज लग्यो ख्यालन को,  
 घालन मनोज लग्यो बीर तीर साजि कै ।  
 सूखन सु बिब लाग्यो दूषन कदम्ब लाग्यो,  
 मोहि न विलंब लग्यो आई गेह तजि कै ।  
 मीजन मयंक लग्यो मीतहू न अंक लग्यो,  
 पंक लग्यो पायनि कलंक लग्यो बजि कै ॥

( १०६ )

सौतिन के त्रास तैं रहे धौं और बास तैं,  
 न आये कौन गास तैं प्यौ करु सो तलास तैं ।  
 कहै 'पदमाकर' सुवास तैं जवास तैं,  
 सु फूलन की रास तैं जगी है महासास तैं ।  
 चाँदनी विकास तैं सुधाधर प्रकास तैं न,  
 राखत हुलास नैन लाउ खसखास तैं ।  
 पौन करु आस तैं न जाउ उठि बास तैं,  
 अरी गुलाब पास तैं उठाउ आस पास तैं ॥

खोज--पता । घालन--मारने लगा । मनोज--कामदेव । मयंक--  
 चन्द्रमा । पंक--कीचड़ । बजि कै--हठात । और बास--अन्य गृह ।  
 गास---लगे रहने से । सुधाधर--चन्द्रमा ।

( १०७ )

फागुन में का गुन विचारि ना दिखाई देत,  
 एतीवार लाई उन कानन में नाइ आउ ।  
 कहै पदमाकर हितू जो है हमारी तो,  
 हमारे कहे बीर वहि धाम लागि धाई आउ ।  
 जोरि जो धरी है वेदरद के दुआरे होरी,  
 मेरी विरहागि की उलूकन लौ लाई आउ ।  
 एरी इन नैनन के नीर में अवीर घोरि,  
 वोरि पिचकारी चित चोर पै चलाइ आउ ॥

( १०८ )

सारह सिंगार कै नवेली की सहेलिन हू,  
 कीन्ही केलि मंदिर में कल्पित करै हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' सुपासही गुलावपास,  
 खासे खस खास खुसबोइन के ढेरे हैं ॥  
 त्यों गुलाव नीरन सो हीरन के हौज भरे,  
 दम्पति मिलाप हित आरती उजरे हैं ।  
 चोखा चाँदनी में बिझी चौसर चमेलिन के,  
 चंदन की चौकी चारु चाँदी के चगोरे हैं ॥

---

एतोवार लाई—इतनी देर की । वीर—सखी । उलूकन—अग्नि शिखा । कल्पित करै—कृत्रिम केली ।



( १०९ )

निसि अँधियारी तऊ प्यारी परवीन चढ़ि,  
 माल के मनेरथ के रथ पै चली गई ।  
 कहै 'पदमाकर' तहाँ न मनमोहन सों,  
 भेंट भई सटकि सहेट ते अली गई ।  
 चंदन सों चांदनी सों चंद सों चमेलिन सों,  
 और बन वेलिन के दलनि दली गई ।  
 आई हुती छैल के छलै कौं छल छंदन सों,  
 छैल तौ छल्यो न आपु छैल सों छली गई ॥

( ११० )

चहचही चहल चहूँधा चारु चंदन की,  
 चद्रक चुनीन चोक चौकन चढ़ी है आब ।  
 कहै 'पदमाकर' फराकत फरसबंद,  
 फहरि फुहारन की फरस फवी है फाब ।  
 मोद मदमाती मनमोहन मिलैके काज,  
 साजि मनि मंदिर मनोज कैसी महताज ।  
 गोल गुल गादी गुल गिलमै गुलाब गुल,  
 गजक गुलाबी गुल गिन्दुक गुले गुलाब ॥

सहेट—संकेत स्थान । मनोज—कामदेव ।

( १११ )

सोसनि दुकूलनि दुराये रूप रोसनी है,  
 वूटेदार घाँघरी की घूमनि घुमाइ कै ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों उन्नत उरोजन पै,  
 तंग अँगिया है तमी तनिन तनाइ कै ।  
 छज्जन की छाँह छपि छैल के मिले के हेतु,  
 छाजति छपा में यों छवोली छवि पाइकै ।  
 बँ रही है छरी फूल की छरी-सी छपि,  
 सांकरी गली में फूल पाँखुरी विछाड़ कै ॥

( ११२ )

चाह भरचौ चंचल हमारौ चित नौल बधू,  
 तेरी चाल चंचल चितौनि में बसत है ।  
 कहै 'पदमाकर' सु चंचल चितौनि हूँ ते,  
 औभकि उभकि भभकनि में फसत है ।  
 औभकि उभकि भभकनि तें सुरभि बेस,  
 बाहीं की गहनि माहि आइ बिलसत है ।  
 बाँहीं की गहनि ते सु नाहीं की कहनि आयाँ,  
 नाहीं की कहनि ते सु नाही निकसत है ॥

---

छपा में—रात्रि में । नौल बधू—नई बहू । चंचल चितौनि—  
 आँखें गड़ा कर न देखना ।



( ११३ )

उभकि भरोखा है भमकि भुकि भाँकी वाम,  
 स्याम की बिसरि गई खवरि तमासा की ।  
 कहै 'पदमाकर' चहूँधा चैत चाँदनी सी,  
 फैलि रही तैसियै सुगंध सुभ स्वासा की ।  
 तैसी छवि तकत तमेर की तरौनन की,  
 तैसी छवि बसन की वारन की वासा की ।  
 मोतिन के माँग की मुखौ की मुसुक्यान हू की,  
 नैनन की नथ की निहारिवे की नासा की ॥

( ११४ )

घँघट की घूम के सु भूमि के जवाहिर के,  
 झिलमिल झालर की भूमि लौं झुलत जात ।  
 कहै 'पदमाकर' सुधाकर मुखी के हीर,  
 हारन में तारन के तोम से तुलत जात ।  
 मंद मंद हैकल मतंग लौं चलेई भले,  
 भुजन समेत भुज-भूषन डुलत जात ।  
 घाँघरे झकोरनि चहूँधा खोरि खोरिहू में,  
 खूब खस बेई के खजाने से खुलत जात ॥

बिसरि—भूल गई । तमेर—पान । तरौनन की—तरकी । सुधा-  
 कर मुखी—चन्द्र बदनी । मतंग—हाथी । खोरि खोरिहु—गली गली ।

( ११५ )

दिन कै किंवार खोलि कीनो अभिसार पै न,  
 जानि परी काहूँ कहाँ जाति चली छल सी ।  
 कहै पदमाकर न नांकरो सँकोरै जाहि,  
 काँकरी पगनि लगे पंकज के दल सी ।  
 कामद सो कानन कपूर ऐसी धूरि लगै,  
 पट सो पहार नदी लागत है नद सी ।  
 वाम चाँदनी सो लगै चंद सो लगत रवि,  
 मग मखतूल सो मही हूँ मखमल सी ॥

( ११६ )

सजि ब्रजचंद पै चली यों मुख चंद जाको,  
 चंद चाँदनी को मुख मंद सों करत जात ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों सहज सुगंध ही के,  
 पुंज बन कुंजन में कंज से भरत जात ।  
 धरत जहाँई जहाँ पग है सु प्यारी तहाँ,  
 मंजुल मजीठ ही की माठ सी दुरत जात ।  
 हारन तें हीरे ठरै सारी के किनारन तें,  
 बारन तें मुकता हजारन भरत जात ॥

अभिसार—प्रीतम से मिलने जाना । पंकज के दल—कमल की पंखुड़ी । ब्रजचन्द—कृष्ण । मजीठ—ही की माठ—लाल रङ्ग की मटकी ।



( ११७ )

सौ दिन को मारग तहाँ को माँगि वेगि विदा,  
 प्यारी 'पदमाकर' प्रभात राति बीते पर ।  
 सो सुनि पियारी पिय गमन बराइवे कौं,  
 आँसुन अन्हार्ई वैठि आसन सु तीते पर ।  
 बालम विदेस तुम जात है तौ जाउ पर,  
 साँची कहि जाउ कब अँहौ भौन रीते पर ।  
 पहर के भीतर कै दो पहर भीतर ही,  
 तीसरे पहर कैधों साँझ ही बितीने पर ॥

( ११८ )

आजु दिन कान्ह आगमन के बधाये सुनि,  
 छाये मग फूलनि सुहाये थल थल के ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों आरती उतारिबे कौं,  
 थारन में दीप हीरा हारन के छलके ।  
 कंचन के कलस भराये भूरि पवन के,  
 ताने तुंग तोरन तहाँई झलाझल के ।  
 पौरि के दुवारे तें लगाइ केलि मंदिर लौं,  
 पदमिनी पाँवड़े पसारे मखमल के ॥

पियगमन बराइवे—प्रीतम को परदेश यात्रा से रोकने के लिये ।  
 तीते—भीजे हुए । रीते—खाली । तोरन—बन्दनवार । पौरि—बरोठा ।  
 पाँवड़े—पैर के नीचे बिछाने वाला बिछौना ।

( ११९ )

कान सुनि आगम सुजान प्रान प्रीतम कों,  
 आनि सखि यान सजी सुन्दरि के आप पास ।  
 कहै 'पदमाकर' सु पवन के हौज भरे,  
 ललित लवालव भरे हैं जल वास वास ।  
 गूँदि गेंदे गुल गज गौहरनि गंज गुल,  
 गुपत गुलबी गुल गजरे गुलाबपास ।  
 खासे खस बीजनि सुपौन पौन खाने खुले,  
 खस के खजाने खस खाने खूब खास खास ॥

( १२० )

पाती लिखौ सुमुखि सुजान पिथ गोविन्द कों,  
 श्री युत सलोने स्याम सुखनि सने रहो ।  
 कहै 'पदमाकर' तिहारी छेम छिन छिन,  
 चाहियतु प्यारे मन मुदित घने रहौ ।  
 विनती इती है कै हमेसहूँ मुहै तौ निज,  
 पाइन की पूरी परिचारिका गने रहौ ।  
 याही में मगन मनमोहन हमारौ मन,  
 लगनि लगाइ लाल मगन बने रहौ ॥

---

आगम--आने की सूचना । छेम--कुशल । हमेसहूँ--सदैव ।  
 परिचारिका -- दासी ।



( १२१ )

मंद मंद उर पै अनंद ही के आँसुन की,  
 बरसैं सुवृद्धैं मुक्तान ही के दानैं सी ।  
 कहैं 'पदमाकर' प्रपची पंचवान के सु,  
 कानन के मान पै परी त्यों घोर घानैं सी ।  
 तानी त्रिवलीन मे बिराजी छवि छाजी सवैं,  
 राजी रोमराजी करि अमित उठनैं सी ।  
 सौहैं पेखि पी कों बिसौहैं भये दोऊ दृग,  
 सौहैं सुनि भौहैं गई उतरि कमान सी ॥

( १२२ )

जगत वशीकरन ही हरन गोपिन औ,  
 तरुन त्रिलोक में न ऐसी सुंदरई है ।  
 कहैं 'पदमाकर' कलान को कदंब,  
 अवलंबन सिंगार को सुजान मुखदाई है ।  
 रसिक सिरोमनि सुराग रत्नाकर है,  
 सौल गुन आगर उजागर बड़ाई है ।  
 ठौर ठकुराई को जु ठाकुर ठसकदार,  
 नंद को कन्हारि से सुनंद को कन्हारि है ॥

सौहैं—सन्मुख । बिसौहैं—विषम । सौहैं—शपथ । क'ब—समूह ।

( १२३ )

जाके मुख सामुहे भयोई जो चहत मुख,  
 लीन्हों नवाइ दीटि पगनि अवांगी री ।  
 वैन सुनिवे कों अति व्याकुल हुते जे कान,  
 तेऊ मृदि राखे मजा मन हू न माँगी री ।  
 झारि डारयो पुलक प्रसेद हू निवारि डारयो,  
 रोकि रसना हत्यों भरी न कछु हागी री ।  
 एते पै रख्यो न मान मोहन लटू पै भटू,  
 टूक टूक हूँ कै ज्यों छटूक भई आँगी री ॥

( १२४ )

देखि 'पदमाकर' गोविंद कों अनंद भरी,  
 आई सजि साँझ ही ते हरषि हिलोरे में ।  
 ए हरि हमारेई हमारे चलो झूलन कों,  
 हेम के हिंडोरिन झुलान के झुकोरे में ।  
 या विधि वधून के सुवैन सुनि वनमाली,  
 मृदु मुसकयाइ कह्यो नेह के निहोरे में ।  
 काल्हि चलि झूलैंगे तिहारेई तिहारी सौह,  
 आजु तुम झूलौ ह्यौ हमारेई हिंडोरे में ॥

पुलक प्रसेद हू—आनन्द के कारण निकला हुआ पसीना ।  
 रसना—जिह्वा । हरषि हिलोरे में—आनन्द के उमंगों में । हेम के  
 हिंडोरिन—सोने के झूले में ।



( १२५ )

साँझ के सलोने घन सबुज सुरंगन सों,  
 कैसे कै अनंग अंग अंगनि सताउतौ ।  
 कहै 'पदमाकर' झकेर झिल्ली सोरन को,  
 मोरन को महत न कोऊ मन ल्याउतौ ।  
 काहु विरही की कही मानि लेतौ जो पै दर्ई,  
 जग में दर्ई तै दयासागर कहाउतौ ।  
 पावस बनायौ तौ न विरह बनाउतौ,  
 जो विरह बनायौ तौ न पावस बनाउतौ ॥

( १२६ )

नैन ही सैन करै बीरी मुख दैन करै,  
 लैन करै चुवन पसारि प्रेम पाना है ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों चातुरी चरित्र करै,  
 चित्त करै सोहैं जो विचित्र रात राता है ।  
 हाव करै भाव करै विविध विभाव करै,  
 बूझै प्यौ न एते पै अबूझन को आता है ।  
 ऐसी परवीनि को कियौ जो यह पुरुष तौ,  
 बीस बिसे जानी महामूरख विधाता है ॥

---

 अनंग — कादेव । पावस — बरसात ।

( १२७ )

धूमि देखौ धरकि धमारन की धूम देखौ,  
 भूमि देखौ भूमित छत्रावै छत्री छत्रि कै ।  
 कहै 'पदमाकर' उमंग रंग सींचि देखौ,  
 केसरि की कीच जो रखौ मैं ग्वाल गवि कै ।  
 उड़त गुलाल देखौ तानन के ताल देखौ,  
 नाचत गुपाल देखौ लैहौ कहा दवि कै ।  
 भेलि देखौ भरिप सकेलि देखौ ऐसी मुख,  
 मेलि देखौ मूठि खोलि देखौ फाग फवि कै ॥

( १२८ )

ब्रज वहि जाय ना कहू यों आई आँखिन तें,  
 उमंगि अनौखी बटा वरपति नेह की ।  
 कहै 'पदमाकर' चलावै खानपान की को,  
 प्रानन परी है आनि दहसति देह की ।  
 चाहिये न ऐसी वृषभानु की किशोरी तोहि,  
 देइवौ दगा जो ठीक ठाकुर सनेह की ।  
 गोकुल की कुल की न गैल की गोपालै सुधि,  
 गोरस की रस की न गौवन के नेह की ॥

---

धमारन की धूम—होली की बहार । प्रानन परी है—जान पर आ गई । दहसति—भय, आशंका ।



( १२९ )

गोकुल की गलिन गलीन यह फैली बात,  
 कन्है नन्दरानी वृषभानु भौन व्याहती ।  
 कहै 'पदमाकर' यहाँई त्यों तिहारे चलै,  
 व्याह को चलन यहै साँवरो सराहती ॥  
 सोचति कहा है कहा करिहैं चवाइन ये,  
 आनंद की अवली न काहे अवगाहती ।  
 प्यारे उपपति ते सु होत अनुकूल • तुम,  
 प्यारी परकीया ते स्वकीया होन चाहती ॥

( १३० )

आई तजिहौं तौं ताहि तरनि तनूजा तोर,  
 ताकि ताकि तारापति तरफति तातीसी ।  
 कहै 'पदमाकर' घरीक ही में घनश्याम,  
 काम तौ कतल बाज कुंजनि हूँ काती सी ॥  
 याही छिन वाही सों न मोहन मिलोगे जो पै,  
 लगनि लगाई एती अगिनि अवानी सी ।  
 रावरी दुहाई तौ बुझाई न बुझैगी फेरि,  
 नेह भरी नागरी की देह दिया बाती सी ।

अवली—पंक्ति । अवगाहती—अनुभव करती । उपपति—यार ।  
 तारापति—चन्द्रमा । काती सी—घातक अस्त्र । रावरी दुहाई—तेरो सौगंध ।

( १३१ )

तासन की गिलमै गलीचा मखतूलन के,  
 झरपै कुमाऊ रहीं भूमि रंग द्वारी में ।  
 कहै 'पदमाकर' सुदीप्मनि मालन की,  
 लालन की सेज झूल जालन सँवारी में ॥  
 जैसे तैसे नित छल बल सों छवीली वह,  
 छिनक' छवीले को मिलाइ दर्द प्यारी में ।  
 छूटि भाजी कर तैं सु करि के विचित्र गति,  
 चित्र कैसी पृथरी न फाई चित्रसारी में ॥

( १३२ )

कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में,  
 क्यारिन में कलिन-कलीन किलकंत हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' परागन में पौनहू में,  
 पानन में पिक में पलास में पतंग है ॥  
 द्वार में दिसान में दुनी में देस देसन में,  
 देखौ दीप दीपन में दीपत दिगंत है ।  
 वीथिन में ब्रज में नवेलिन में वेलिन में,  
 वनन में बागन में बगरौ बसंत है ॥

---

मखतूलन—रेशम । दुनी में—संसार । बगरौ—फैला हुआ ।



( १३३ )

पात बिन कीन्हें ऐसी भाँति गन बेलिन के,  
 परत न चीन्हें जे ये लरजत कुंज हैं ।  
 कहैं 'पदमाकर' विसासी या वसंत के सु,  
 ऐसे उतपात गात गोपिन के भुंज हैं ॥  
 ऊधो यह सूधो सों संदेशो कहि दीजो भलो,  
 हारे सों हमारे ह्यौ न फूले वन-कुंज हैं ।  
 किसुक गुलाव कचनार औ अनारन की,  
 डारन पै डोलत अँगारन के पुंज हैं ॥

( १३४ )

फुहरै फुहार नीर नहर नदी-सी बहै,  
 छहरै छवीन छाम छीटिन की छाटी हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों जेठ की जलाकैं तहाँ,  
 पावैं क्यों प्रवेस बेस बेलिन की बाटी हैं ॥  
 बारहू दरौन बीच बार हू तरफ तैसी,  
 बरफ बिछाई तापै सीतल सुपाटी हैं ।  
 गजक अँगूर को अँगूर सों उचौहैं कुच,  
 आसव अँगूर को अँगूर ही की टाटी हैं ॥

भुंजहैं—जले जाते हैं । छाम—तुम्ही । बेस—अच्छा ।

( १३५ )

मल्लिकन मंजुल मलिंद मतवारे मिले,  
 मंद मंद मारुत महीम मनसा की है ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों नदन नदीन नित,  
 नागर नवेलिन की नजर नसा की है ॥  
 दौरत दरेरौ देत दादुर सु दुंदै दीह,  
 दामिन दमकत दिसान में दसा की है ।  
 बद्दलनि बुंदनि विलोकौ वगुलान वाग,  
 बंगलान बलिन बहार बरपा की है ॥

( १३६ )

चंचला चमाकैं चहूँ ओरन ते चाह भरी,  
 चरजि गई तौ फेरि चरजन लागी री ।  
 कहै 'पदमाकर' लवंगन की लेनी, लता,  
 लरजि गई तौ फेरि लरजन लागी रो ॥  
 कैसे धरौ धीर वीर त्रिविध समीरैं तन,  
 तरजि गई तौ फेरि तरजन लागी री ।  
 घुमाड़े घमंड घटा घन की घनेरी अबै,  
 गरजि गई ती फेरि गरजन लागी री ॥

मल्लिकन—चमेली । मलिंद—भँवरे । चंचला—त्रिजुली । लरजि  
 गई—काँप गई । त्रिविध समीरैं—शीतल मन्द सुगन्धित हवा ।



( १३७ )

वरसत मेह नेह सरसत अंग अंग,  
 भरसत देह जैसे जरत जवासौ है ।  
 कहै 'पदमाकर कलिन्दी के कदंवन पै,  
 मधुपनि कीन्हों आइ महत मवासौ है ॥  
 ऊधो यह ऊधम जताइ दीजौ मोहन कों,  
 ब्रज कौ सुवासौ भयौ अग्नि अवा सौ है ।  
 पातकी पपीहा जल पान को न प्यासो,  
 काहू बीथित बियोगिन के प्रानन को प्यासो है ॥

( १३८ )

तालन पै ताल तमालन पै मालन पै,  
 वृन्दावन बीथिन बहार बंसीबट पै ।  
 कहै 'पदमाकर' अखंड रास मंडल पै,  
 मंडित उमंडि कहा कलिंदी के तट पै ॥  
 छिति पर छान पर छाजत छतान पर,  
 ललित लतान पर लाड़िली को लट पै ।  
 आई भली छाई यह सरद-जुन्हाई, जिहि,  
 पाइ छवि आजु ही कन्हाई कै मुकुट पै ॥

जवासो—एक प्रकार की घास जो वर्षा में झुलस जाती है ।  
 वासो—निवास । विथित—दुखी ।

( १३९ )

खनक चुरीन की त्यों उनक मृदगन की,  
 रुनुक सुनुक सुर नूपुर के जाल को ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों बाँसुरी की धुनि मिलि,  
 रह्यो बँधि सरस सनाको एकताल को ॥  
 देखत बनत पै न कहत बनै री कछु,  
 विविध विलास यों हुलास यह ख्याल को ।  
 चंद छवि रास चाँदनी को परकास,  
 राधिका मंदहास रास मंडल गोपाल को ॥

( १४० )

अगर की धूप मृगमद की सुगंध वर,  
 बसन विसाल जाल अँग ढाँकियतु है ।  
 कहै 'पदमाकर' सु पौन को न गौन कहा,  
 ऐसे भौन उमँगि उमँगि छाकियतु है ॥  
 भोग औ संयोग हित सुरत हिमंत ही में,  
 एते और सुखद सुहाय बाकियतु है ।  
 तान की तरंग तरुनापन तरजि तेज,  
 तेल तूल तरुनि तमोल ताकियतु है ॥

---

जाल—समूह । मृगमद—कस्तूरी । तरनि तेज—घाम । तूल—  
 रूई । तमोल—पान ।



( १४१ )

गुलगुली गिलमैं गलीचा हैं गुनीजन हैं,  
 चाँदनी हैं चिक हैं चिरागन की माला है ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों गजक गिजा हैं सजी,  
 सेज हैं सुराही हैं सुरा हैं और प्याला हैं ॥  
 सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हें,  
 जिनके अधीन एते उदित मसाला हैं ।  
 तान तुक ताला हैं विनोद के रसाला हैं,  
 सुवाला हैं दुसाला हैं विसाला चित्रपाला हैं ॥

( १४२ )

गोरस को लूटिबो न छूटिबो छरा को गनै,  
 दूटिबो गनै न कछु मोतिन के माल को ।  
 कहै 'पदमाकर' गुलालिनि गुनीली हेरि,  
 हरषै हँसैयों कर झूँठे झूँठ ख्याल को ॥  
 हाँ करति ना करति नेह की निसा करति,  
 साँकरी गली में रंग राखति रसाल को ।  
 दोबो दधिदान को सु कैसे ताहि भाव न है,  
 जाहि मन भायो झारि झगरी गोपाल को ॥

---

गिजा—भोजन की सामग्री । सुरा—मदिरा । रंग राखति  
 रसाल को—प्रेमी का अभिलाषा पूरी करती है ।

( १४३ )

एरी बलवीर के अहीरन की भीरन में,  
 सिमिट समीरन अवीर को अटा भयो ।  
 कहै 'पदमाकर' मनोज मन मौजन ही,  
 मैन के हटा में पुनि प्रेम को पटा भयो ॥  
 नेही नंदलाल की गुलाल की घलाघल में,  
 राजत पसीजि तन घन की घटा भयो ।  
 चोरै चख चोटन चलाक चित्त चोगी भयो,  
 लूटि गई लाज कुलकानि को कटा भयो ॥

( १४४ )

भेद बिन जाने एती वेद न विसाहिबे को,  
 आज हौं गई ही बाट वंसीवट वारे की ।  
 कहै 'पदमाकर' लटू है लोट पोट भई,  
 चित्त में चुभी जो चोट चाय चटवारे की ॥  
 बावरी लौं वृक्षति बिलोकति कहा तू बीर,  
 जान कहा कोऊ परि प्रेम हटवारे की ।  
 उमड़ि उमड़ि बहै बरसैसु आखिन है,  
 घट में बसी जो घटा पीत पटवारे की ॥

---

बलवीर - श्रीकृष्ण । हटा - बाज़ार । कुलकानि को कटा—वंश  
 मर्यादा का संहार हो गया । बेदन विसाहिबे—पीड़ा मोल लेने का—  
 बाट—मग । लूट है— मोहित होकर । बावरी—पागल ।



( १४५ )

रूप रचि गोपी को गोविन्द गो तहाँई जहाँ,  
 कान्ह बेनि बैठी कोऊ गोप की कुमारी है ।  
 कहै 'पदमाकर' यों ऊलट कहा को कहा,  
 कसकै कन्हैया कर मसकै जुप्यारी है ॥  
 नारी ते न होत नर नर ते न होत नारी,  
 विधि के करेहूँ कहूँ काहूँ ना निहारी है ।  
 काम करता की करतूत या निहारी जहाँ,  
 नारी न होत नर, होत लख्यो नारी है ॥

( १४६ )

सोभित सुमनवारी सुमना सुमनवारी,  
 कौन हूँ सुमनवारी को नहिं निहारी है ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों बाँधन बसनवारी,  
 वा ब्रज बसनवारी ह्यौ हरनवारी है ॥  
 सुवरनवारी रूप सुवरन वारी सजै,  
 सुवरन वारी काम करके सँवारी है ।  
 सीकरन वारी सेद सी करन वारी रति,  
 सीकरन बारी सो बसीकरन वारी है ॥

---

ह्यौ—हृदय । सेद सी करनवारी—जिसके मुख पर पसीने की बूंदें  
 आ गई हों ।

( १४७ )

सजि ब्रज चंद पै चली यों मुख चंद जाकौ,  
 चंद चांदनी को मुख मंद सों करत जात ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों सहज सुगंध ही के,  
 पुंज बन कुंजन में कंज से भरत जात ॥  
 धरत जहाँ जहाँ पग है पियारी तहाँ,  
 मंजुल मजीठ ही के माठ से ढरत जात ।  
 चारन तें हीरा सेत सारी की किनारन तें,  
 हारन तें मुकता हजारन भरत जात ॥

( १४८ )

अंचल के ऐंचे चल करती दृगंचल को,  
 चंचला तें चंचल चलै न भजिद्वारे को ।  
 कहै 'पदमाकर' परैसी चौकि चुंवन में,  
 छलनि छपावै कुच कुंभनि किनारे को ॥  
 छाती के छुये पै परै रातो सी रिसाई,  
 गलबाही के किये ते नाहि नाहि पै उचारै को ।  
 ही करति सीतल तमासे तुंग ती करति,  
 सी करति रति में बसी करति प्यारे को ॥

अंचल—दुपट्टा । दृंचल—पलकें । चंचला—बिजुली । उचारै—कहे ।



( १४९ )

मोहि लखि सोवत बिथोरि गो सुबेनी बनि,  
 तेरि गो हिये को हरा छोरि गो सु गैया को ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों घोरि गो घनेरो दुख,  
 बोरिगो विसासी आज लाज ही की नैया को ॥  
 अहित अनैसी ऐसों कौन उपहास यहै,  
 सोचत खरी मैं परी जोहत जुन्हैया को ।  
 चूझैंगी चवैया तब कैहैं कहा दैया इत,  
 परिगो को मैया मेरी सेज पै कन्हैया को ॥

( १५० )

आवत उसासी दुख लगै और हाँसी सुनि,  
 दासी उर लाइ कहो को नहि दहा कियो ।  
 कहै 'पदमाकर' हमारे जान ऊधो उन,  
 तात को न मात को न भ्रात को कहा कियो ॥  
 कंकालिनि कूबरी कलंकिनि कुरूप तैसी,  
 चेटकिनि चेरी ताके चित्त को कहा कियो ।  
 राधिका की कहवत कह दीजो मोहन सों,  
 रसिक सिरोमनि कहाइ धौ कहा कियो ॥

---

सुबेनी—जूड़ा । विसासी—विश्वास करने वाला । अनैसी—बुरा ।  
 जोहत—देखता । चवैया—बदनाम करने वाले । कंकालिनि—अस्थि  
 पंजर वाली । चेटकिनि—टोना करने वाली । रसिक सिरोमनि—सर्वश्रेष्ठ प्रेमी ।

( १५१ )

गोकुल में गोपिन गोविंद संग खेलीं फाग,  
 राति भरि प्रात समै ऐसी छवि छलकै ।  
 देहैं भरी आलस कपोल रस रोरी भरे,  
 नींद भरे नयन कळूक भूपै भलकै ॥  
 लाली भरे अधर बहाली भरे मुखवर,  
 कवि 'पद्माकर' विलोकै को न ललकै ।  
 भाग भरे लाल औ सुहाग भरे सब अंग,  
 पीक भरीं पलकैं अवीर भरी अलकैं ॥

( १५२ )

सोच न हमारे कळू त्याग मन मोहन के,  
 तन को न सोच जो पै यों हीं जरि जाइ है ।  
 कहै 'पद्माकर' न सोच अब येहू यह,  
 आइ है तो आइ है न आइ है न आइ है ॥  
 जोग को न सोच अरु भोग को न सोच कळू,  
 एही बड़ो सोच सो तौ सबनि सुहाइ है ।  
 कूवरी के कूवर में बेधो है त्रिभंग, ता  
 त्रिभंग को त्रिभंगी लाल कैसे सुरभाइ है ॥

---

अवली—पंक्ति । अवगाहती—अनुभव करती । उपपत्ति—यार ।



फुटकल

७७

( १५३ )

एकै संग धाये नंदलाल औ गुलाल दोऊ,  
 दगनि गये जु भरि आनंद मढ़ै नहीं ।  
 धोड़ धोड़ हारी 'पदमाकर' तिहारी सौह,  
 अब तौ उपाय एकौ चित्त पै चढ़ै नहीं ॥  
 कैसी करौ कहाँ जाऊँ कासों कहौ कौन सुनै,  
 कोऊ तौ निकासौ जासों दरद बढ़ै नहीं ।  
 एरी मेरे वीर जैसे तैसे इन आँखिन तें,  
 कढ़िगो अवीर पै अहीर को कढ़ै नहीं ॥

( १५४ )

भिलत झकोर रहै जोवन को जोर रहै,  
 समद मरोर रहै सोर रहै तब सों ।  
 कहै 'पदमाकर' तकैयन के मेह रहै,  
 नेह रहै नैननि न मेह रहै दब सों ॥  
 बाजत सुबैन रहै उनमद नैन रहै,  
 चित्त में न चैन रहै चातकी के ख सों ।  
 गेह में न नाथ रहै द्वारे ब्रजनाथ रहै,  
 कौ लौ मन हाथ रहै साथ रहै सब सों ॥

तकैयन—ताकने वाले । उनमद—पागलपन । ख—शब्द ।

( १५५ )

अधखुली कंचुकी उरोज अधआधे खुले,  
 अधखुले वेष न खरेखन के फलकैं ।  
 कहैं 'पदमाकर' नवीन अधनीवी खुली,  
 अधखुले छहरि छराके छोर छलकैं ॥  
 भोर जगि प्यारी अध ऊरध इतैं की ओर,  
 भाखी भिखि भिरकि उचारी अध पलकैं ।  
 आँखैं अधखुली अधखुली खिरकी हैं खुली,  
 अधखुले आनन पै अधखुली अलकैं ॥

( १५६ )

दूरि ही ते देखत विथा मैं वा वियोगिनि की,  
 आई भले भाजि ह्याँ इलाज मदि आवेंगी ।  
 कहैं 'पदमाकर' सुनो हो घनश्याम जाहि,  
 चेतन कहूँ जो एक आहि कदि आवैगी ॥  
 सर सरितान को न सूखत लगैगी देर,  
 एती कछू जुलमिनि ज्वाला बदि आवेगी ।  
 ताके तन ताप की कहैं मैं कहा बात,  
 मेरे गातहि छुवौ तो तुम्है ताप चदि आवैगी ॥

---

अधनीवी—नारा । जुलमिनि—अत्याचारी ।



फुटकल

७९.

( १५७ )

बानी के गुमान कल कोकिल कहानी कहा,  
 बानी की सुबानी जाहि आवत भनै नहीं ।  
 कहै 'पदमाकर' गोरार्ई के गुमान कुच,  
 कुंभन पै केसरि की कंचुकी ठनै नहीं ।  
 रूप के गुमान तिल उत्तमान आनै उर,  
 आनन निकाई पाइ चँद कीरनै नहीं ।  
 मृदुता गुनान मखतूल न मानै कछु,  
 गुन के गुमान गन गौरि को गनै नहीं ॥

( १५८ )

ताकिये तितै-तितै कुसुंभ सों चुआरौई परै,  
 प्यारी परवीन पाउ धारति जितै-तितै ।  
 कहै 'पदमाकर' सुपौन तें उताली,  
 वनमाली पै चली यों बाल बासर बितै बितै ।  
 बारही के झारन उतारि देत आभरन,  
 हीरन के हार देति हिलि न हितै हितै ।  
 चाँदनी के चासर चहूँधा चौक चाँदनी में,  
 चाँदनी सी आई चंद चाँदनी चितै चितै ॥

---

बानो की सुबानी—सरस्वती की बाणी । तिन उत्तमान—देवांगना,  
 अप्सरा । बासर—दिन ।

( १५९ )

सिंधु के सपूत सुत सिंधु तनया के बंधु,  
 मंदिर अमंद सुभ सुंदर सुधाई के ।  
 कहै 'पदमाकर' गिरीस के वसेहौ सीस,  
 तारन के ईस कुल-कारन कन्हारि के ॥  
 हाल ही के बिरह बिचारी ब्रजवाल-ही पै,  
 ज्वाल से जगावत जुवाल सी जुन्हारि के ।  
 एरे मति मंद चंद आवत न तोहि लाज,  
 हूँ कै द्विजराज काज करत कसाई के ॥

( १६० )

चहचही चुभकी चुभी है चौक चंचन में—  
 लहलही लाँची लटें लटकीं सुलंक पै ।  
 कहै 'पदमाकर' मजानि मरगजी मंजु,  
 मसकी सुआंगी है उरोजन के अंक पै ॥  
 सोई ससार यों सुगंधनि समोई स्वेद,  
 सीतल सलोने लोने बदन मयंक पै ।  
 किन्नरी नरी है कै छरी है छविदार परी,  
 टूटि सी परी है कै परी है परजंक पै ॥

सिंधु तनया के बन्धु—लक्ष्मी । कुल-कारन कन्हारि—वंश प्रवर्त्तक ।  
 सुलंक—कमर । मरगजा—सिकुड़न पड़ी हुई । सुगंधनि समोई—खुशबू-  
 दार । लोने बदन मयंक—सुन्दर मुख । परजंक—चारपाई ।



( १६१ )

पाली पैज पन की प्रवेस करि पावक मों,  
 पौन से सिताव सहगौन की गती भई ।  
 कहै 'पदमाकर' पताका प्रेम पूरन को,  
 प्रगट पतिव्रत की सौगुन रती भई ।  
 भूमि हू अकाश ही पताल हू सराहै सब,  
 जाको जस गावत पवित्र मो मती भई ।  
 सुनत पयान श्री प्रताप को पुरंदर पै,  
 धन्य पटरानी जोधपुर में सती भई ॥

( १६२ )

आई संग आलिन के ननद पठाई नीठि,  
 सोहत सोहाई सीस ईगुर सुपट की ।  
 कहै 'पदमाकर' गंभीर जमुना के तीर,  
 लागी घट भरन नवेली नेह अटकी ।  
 ताही समय मोहन सु बाँसुरी बजाई,  
 मधुर मलार गाई और बंसीवट की ।  
 तान रहे लट की रही न सुधि धूँघट की,  
 घाट की न औघट की न वाट की घट की ॥

पौन से सिताव—हवा की तेजी । सहगौन—मृत पति के साथ सती होना । नेह अटकी—प्रेम में फंसी हुई ।

( १६३ )

आज वरसाने की नवेली अलवेली वधू,  
 मोहन बिलोकिये कों लाज काज लवैरही ।  
 छज्जा छज्जा भाँकती झरोखनि झरोखनि है,  
 चित्रसारी चित्रसारी चंद सम वै रही ॥  
 कहै 'पदमाकर' त्यों निकस्यौ गोविन्द ताहि,  
 जहाँ तहाँ इकटक ताकि रही द्वै घरी ।  
 छज्जावारी छकी सी उझकी सी झरोखावारी,  
 चित्र कैसी लिखी चित्रसारी वारी है रही ॥

( १६४ )

द्यौसगन गौरी के सु गिरिजा गुसांइन को,  
 आवत इहाँई अति आनन्द इतै रहै ।  
 कहै 'पदमाकर' प्रतापसिंह महाराज,  
 देखौ देखिये कों दिव्य देवता तितै रहै ॥  
 सैल तजि बैल तजि फल तजि गैलनि में,  
 हेरत उमा को यो उमापति हितै रहै ।  
 गोरिन में कौन धौं हमारी गनगौरि यहै,  
 संभु घरी चारिक लौं चारिक चितै रहै ॥

---

द्यौसगन गौरि के— देवी के मेले के दिन । उमा—पार्वती ।



( १६५ )

वेज आये द्वारे हौं हुती जो अगवारे,  
 और द्वारे अगवारे कोऊ तों न तिहि काल मैं ।  
 कहै 'पदमाकर' वे हरषि निरखि रहे,  
 त्योंही रही हरषि निरखि नंदलाल मैं ।  
 मोहिं तो न जान्यो गयौ मेरी आली मेरो मन,  
 मोहन के जाइ धौं परचौ है कौन ख्याल मैं ।  
 भूल्यौ भौंह भाल मैं चुभ्यो कै टेढ़ी चाल मैं,  
 छक्यो कै छविजाल मैं कै वींध्यो बनमाल मैं ॥

( १६६ )

सजनी लगी है कहूँ कबहूँ सिंगारन को,  
 तजन लगी है कहूँ ऐसे वसवारी की ।  
 चखन लगी है कछू चाह 'पदमाकर' त्यों,  
 लखन लगी है मंजु मूरति मुरारी की ।  
 सुन्दर गोविन्द गुन गनन लगी है कछू  
 सुनन लगी है बात बाँकुरे विहारी की ।  
 पगन लगी है लगी लगन हिये सेो नेकु,  
 लगन लगी कछू पीकी प्रान प्यारे की ॥

---

अगवारे—मकान के आगे । पगन—पैर ।

( १६७ )

नदत बिहद नृपराम दल बदल में,  
 ऐसौ एक हौही दुष्ट दानव दलन है ।  
 कहै 'पदमाकर' चहै तो चहूँ चक्रन को,  
 चीरिय डारौ पल में पलैया पेज पन हैं ।  
 दशरथलाल है कराल कछू लालपरि,  
 भाषत भयोई नेक रावनै न गनिहो ।  
 रीतौ करौ लंकगढ़ इंद्रहिं अभीतौ करौ,  
 जो तौ इन्द्रजीतौ आजु तौ मैं लक्ष्मन हैं ॥

( १६८ )

इत कपि रीछ उत राछसन हीं की चमू,  
 डंका देत बंकागढ़ लका ते कढ़ै लगी ।  
 कहै 'पदमाकर' उमंड जग हीं के हित,  
 चित में कछूक चोप चाप की चढ़ै लगी ।  
 वानन के बाहिबे कों कर में कमान कसि,  
 धाई धूर धान आसमान में मढ़ै लगी ।  
 देखनै वनी है दुहूँ दल की चढ़ा चढ़ी में,  
 रामदहगहू पै नेकु लाली जो चढ़ै लगी ॥

---

अभीतौ—निर्भय । चमू—सेना । बाहिबे—चलाने ।



( १५९ )

चितै चितै चारों ओर चौंकि २ परै त्योंहीं,  
 जहाँ तहाँ जब तब खटकट पात हैं ।  
 भाजन सो चाहत गँवार ग्वालिन की कछू,  
 डरनि डराने से उठाने रोमगात हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' सु देखि दसा मोहन की,  
 सेसहु महेसहु सुरेसहु सिहात हैं ।  
 एक पाय भीत एक पाय भीत काधे धरे,  
 एक हाथ छीकौं एक हाथ दधि खात हैं ॥

( १७० )

आवत गलानि जो बखान करौ ज्यादा यह,  
 मादा मल मूत और मज्जा की सलीती है ।  
 कहै 'पदमाकर' जरा तौ जोगि भीजी तब,  
 छीजी दिन रैन जैसे रेनुही की भीती है ।  
 सीतापति राम के सनेह बस बीती जो पै,  
 तौ तो दिव्य देह जम जातना ते जीती है ।  
 रीती रामनाम तें रही जो बिन काम तौ या,  
 खारिज खराब हाल खाल की खलीती है ॥

---

उठाने रोमगात—शरीर रोमांचित हो गया है । मज्जा—चरबी ।  
 छीजी—क्षीण होती गई । रेनुही की भीती है—बालू की दीवार । जम  
 जातना—यमराज का दिया हुआ दण्ड ।

( १७१ )

जैसी छवि श्याम की पगी है तेरी आँखिन में,  
 ऐसी छवि तेरी श्याम आँखिन पगी रहे ।  
 कहै 'पदमाकर' ज्यों तान में पगी है त्योंहीं,  
 तेरी मुसुकान कान्ह प्रान में पगी रहे ॥  
 धीर धर धीर धर कीरति किशोरी भई,  
 लगन इतै उतै बराबर लगी रहे ।  
 जैसी रट तोंहि लगी माधव की राधे वैसी,  
 राधे राधे राधे रट माधव लगी रहे ॥

( १७२ )

मोहि तजि मोहनै मिल्यो है मन मेरो दौरि,  
 नैन हूँ मिले हैं देखि देखि सांवरो सरीर ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों तानमय कान भये,  
 हौं तौ रही जकि थकि भूलीसी भ्रमीसी वीर ॥  
 एतौ निरदर्ई दर्ई इनको न दया दर्ई,  
 ऐसी दसा भई मेरी कैसे तन धरौं धीर ।  
 होतो मन हूँ के मन नैनन के नैन जोपै,  
 कानन के कान तो पै जानतो पराई पीर ॥

---

किशोरा—राधिका । रही जकि—चकराई हुई ।



( १७३ )

मधुर मधुर मुख मुरली बजाइ धुनि,  
 धमकि धमारनि की धाम धाम कै गयो ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों अगर अवीरन की,  
 करि कै घलाघली छला छली चितै गयो ॥  
 कोहै वह ग्वालिनी गुवालिन के संग में,  
 अनंग छवि वारो रसरंग में भिजै गयो ।  
 छै गयो सनेह फिरि छवै गयो छरा के छोर,  
 फगुवा न दै गयो हमारो मन लै गयो ॥

( १७४ )

नीकी कै अनैसी पुनि जैसी होइ तैसी,  
 यौवन की मूरि तें न दूरि भागियतु है ।  
 कहै 'पदमाकर' उजागर गोविन्द जो पै,  
 चूकि गे कहूँ तो एते रोष रागियतु है ॥  
 प्रेम रस हाथलै जगाय लै हिये सों हित,  
 पायलै पहिरि चलु प्रेम पागियतु है ।  
 एरी मृगनैनी तेरी पाय लगि वेनी पाइ,  
 पाइ लगि तेरे फेरि पाइ लागियतु है ॥

छरा के छोर—नारे का सिरा । पायलै—पर का आभूषण ।

( १७५ )

वाही के रँगी है रँग वाही के पगी है मग,  
 वाही के लगी है संग आनन्द अगाधा को ।  
 कहै 'पदमाकर' न चाह तजि नेक दग,  
 तारन तें न्यारोकियो एक पल आधा को ॥  
 ताहू पै गोपाल कछु ऐसे ख्याल खेलत हैं,  
 मान मोरिवे की देखिवे की करि साधा को ।  
 काहू पै चलाइ चख प्रथम खिझावैं फेरि,  
 बाँसुरी बजाइ कै रिझाइ लेत राधा को ॥

( १७६ )

रैन दिन नैनन तें बहत न नीर कहा,  
 करतौ अनंग को उमंग सरचाप तौ ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों राग बाग बन कैसे,  
 तैसो तन ताप ताप तारापति तापतौ ॥  
 कीन्हों जो वियोग तो संयोग हू न देतो दर्ई,  
 देतो जो संयोग तो वियोगहि न थापतौ ।  
 होतो जो न प्रमम संयोग सुख वैसो वह,  
 ऐसो अब तो न या वियोग दुख व्यापतौ ॥

---

नेक—थोड़ा थोड़ा । चखु—नेत्र । तन ताप—शरीर की गरमी  
 से तच कर । व्यापतौ—फैलता ।



( १७७ )

वैसही की थोरी पै भोरी है किशोरी यह,  
 याकी चित चाह राह और की ममैयो जिन ।  
 कहै 'पदमाकर' सुजान रूपखान आगे,  
 आन वान आन की सु आन कै लगैयो जिन ॥  
 जैसे अब तैसे साधि सौंहनि मनाइ ल्याई,  
 तुम इक मेरी बात ऐती बिसरैयो जिन ।  
 आजु की घरी तें लै सु भूलिहू भले हो स्याम,  
 ललिता को लैके नाम बाँसुरी बचैयो जिन ॥

( १७८ )

ऐसी मति होति अब ऐसी करौं आली,  
 वनमाल के सिंगार में सिंगारि बोई करिये ।  
 कहै 'पदमाकर' समाज तजि हैकाज तजि,  
 लाज को जहाज तजि डारिबोई करिये ॥  
 घरी-घरी पल-पल छिन-छिन रैन दिन,  
 नैननि की आरती उतारबोई करिये ।  
 इन्दु ते अधिक अरविंद तें अधिक ऐसो,  
 आनन गोविन्द को निहारिबोई करिये ॥

---

भोरी है—सीधी साधी । सौंहनि—शपथ । बिसरैयो—भूलना ।  
 इंदु—चन्द्रमा । अरविंद—कमल ।

( १७९ )

हैं हूँ गई जान तित आइ गो कहूँ तें कान्ह,  
 आनि वनितान हूँ को झपकि झलौ गयौ ।  
 कहै 'पदमाकर' अनंग की उमंगन सों,  
 अङ्ग अङ्ग मेरे भरि नेह को छलौ गयौ ॥  
 ठानि ब्रज ठाकुर ठगोरिन की टेला टेल,  
 मेला के मझार हित हेला कै भलौ गयौ ।  
 छार छूँ छला छूँ छिगुनी छूँ छरा छोरन छूँ,  
 छलिया छबीलौ छैल छाती छूँ चलौ गयौ ॥

( १८० )

घर ना सुहात ना सुहात बन बाहर हू,  
 बाग ना सुहात जे खुसाल खुसबोही सों ।  
 कहै 'पदमाकर' घनेरे धन धाम त्यों हीं,  
 चंद ना सुहात चाँदनी हूँ जोग जोही सों ॥  
 साँझ ना सुहात ना सुहात दिन साँझ कछू,  
 व्यापी यह बात सो बखानत हैं तोही सों ।  
 राति ना सुहात ना सुहात परभात आली,  
 जब मन लागि जात काहू निरमोही सों ॥

---

वनितान— स्त्रियाँ । निरमोहो— निर्दई ।



( १८१ )

आम को कहत अमिली है अमिली को आम,  
 आक ही अनारन को आँकिवौ करति है ।  
 कहै 'पदमाकर' तमालन को ताल कहै,  
 तालनि तमाल कहि तकिवो करति है ॥  
 कान्हैं कान्ह कहू कहि कदली कदवन को,  
 भेटि परिरंभन में छाकिवो करति है ।  
 साँवरे जू रावरे यों विरह बिकानी बाल,  
 वन-वन बावरी लौं ताकिवो करति है ॥

( १८२ )

पानन के प्यारे तन ताप के हरन हारे,  
 नंद के दुलारे ब्रजवारे उमहत हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' उरूजे उर अंतर यों,  
 अंतर चहें हूँ जे न अंतर चहत हैं ॥  
 नैननि बसे हैं अंग अंग हुलसे हैं रोम,  
 रोमनि रसे हैं निकसे हैं को कहत हैं ।  
 ऊधो वे गोविन्द कोऊ और मथुरा में यहाँ,  
 मेरे तो गोविन्द मोहिं मोहि में रहत हैं ॥

---

आकही—मदार । कदली—केला । परिरंभन—अलिङ्गन । तन  
 ताप के हरन—शरीर की तपन ।

( १८३ )

एहो नंदलाल ऐसी व्याकुल परी है बाल,  
 हाल ही चलौ तो चलौ जेरी जुरि जायगी ।  
 कहै 'पदमाकर' नहीं तै ये भंकोरे लगें,  
 ओरे लौं अचाक विन घेरे घुरि जायगी ॥  
 सीरे उपचारन घनेरे घनसारन को,  
 देखतही देखौ दामिनी लौं दुरि जायगी ।  
 तौ लग है चैन जौ लौं चेती है न चंदमुखी,  
 चेतैगी कहूँ तो चाँदनी में चुरि जायगी ॥

( १८४ )

हँसि हँसि भाजै देखि दूलह दिगंबर को,  
 पाहुनी जे आवैं हिमाचल के उछाह में ।  
 कहै 'पदमाकर' सु काहूँ सो कहै को कहा,  
 जोई जहाँ देखै सो हँसेई तहाँ राह में ॥  
 मगन भयेऊ हँसै नगन महेस ठाढे,  
 औरै हँसे एऊ हँसि हँसि के उमाह में ।  
 सीस पर गंगा हँसैं भुजनि भुजंगा हँसैं,  
 हासही को दंगा भयो नंगा के विवाह में ॥

---

ओरे लौं अचाक--ओले के समान सहसा । सीरे उपचारन--  
 शीतल करने का उपाय । घनसारन--चन्दन । दिगंबर--नग्न शिव ।  
 भुजंगा--काले सर्प ।



( १८५ )

आँसुन अन्हाय हाय हाय कै कहत सब,  
 औधपुर वासी कै कहा यों दुःख दाहिये ।  
 कहै 'पदमाकर' जुलूस युवराज को सु,  
 ऐसो धनी है न जाय जाके सीस बाहिये ॥  
 सुत के पयान दशरथ ने तजे जो प्रान,  
 बाढ्यो सोक सिन्धु सो कहाँ लौ अवगाहिये ।  
 मृद मंथरा के कहे बन को जु भेजे राम,  
 ऐसी बात कैकेयी को तो ये न चाहिये ॥

( १८६ )

वारि टारि डारौं कुंभकर्णहि विदारि डारौं,  
 मारौं मेघनादै आजु यों बल अनंत हैं ।  
 कहै 'पदमाकर' त्रिकूटही को ढाहि डारौं,  
 डारत करेई यातुधानन को अंत हैं ॥  
 अच्छहि निरच्छ कपि रच्छ है उचारों इमि,  
 तोसे तिच्छ तुच्छन को कछुवै न गंत हैं ।  
 जारि डारौं लंकहि उजारि डारौं उपवन,  
 फारि डारौं रावन को तो में हनुमंत हैं ॥

---

यातुधानन—राक्षसी सेना । अच्छहि निरच्छ—अक्षय कुमार को मार कर ।

( १८७ )

सोहै अत्र ओढे जे न छोड़े सीस संगर की,  
 लंगर लँगूर उच्च ओज के अतंका में ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों हुंकरत फुंकरत,  
 फैलत फलात फाल बाँधत फलंका में ॥  
 आगे रघुवीर कै समीर केतने के अंग,  
 तारी दै तड़ाक तड़ा तड़के तमंका में ।  
 संका दै दसानन को हंका दै सुवंका वीर,  
 डंका दै बिजै को कपि कूदि परयो लंका में ॥

( १८८ )

जाही ओर शोर परै घोर घन ताही ओर,  
 जोर जंग जालिम को जाहिर दिखात है ।  
 कहै 'पदमाकर' अरीन की अवाई पर,  
 साहब सवाई की ललाई लहरात है ॥  
 पारिघ प्रचंड चमू हरषित हाथी पर,  
 देखत बनै ही सिंह माधव को गात है ।  
 उद्धत प्रसिद्ध युद्ध जीति ही के सौदा हितु,  
 रौदा ठनकारि तन हौदा न अमात है ॥

---

सीस संगर की—युद्ध का अग्र भाग । समीर के तनु—पवन पुत्र ।  
 पारिघ प्रचंड—घातक शस्त्र विशेष ।



( १८९ )

वकसि वितुंड दये मंडन के मंड रिपु,  
 मंडन की मालिका दर्ई ज्यों त्रिपुरारी को ।  
 कहै 'पदमाकर' करोरन को कोष दये,  
 षोडसह हू दीन्हें महादान अधिकारी को ॥  
 ग्राम दये धाम दये अमित अराम दये,  
 अन्न जल दीन्हें जगती के जीवधारी को ।  
 दाता जयसिंह दोय बातैं तौ न दीन्हैं कहूँ,  
 बैरिन को पीठ और डीठि पर नारी को ॥

( १९० )

सम्पति सुमेर की कुबेर की जु पावै ताहि,  
 तुरत लुटावत बिलंब उर धारै ना ।  
 कहै 'पदमाकर' सुहेम हय हाथिन के,  
 हलके हजारन के विरति विचारै ना ॥  
 गंज गज बकस महीप रघुनाथ राव,  
 याहि गज धोखे कहूँ काहू देइ डारै ना ।  
 याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,  
 गिरि तें गरे तें निज गोद तें उतारै ना ॥

---

वितुंड—हाथी । अमित अराम दये—बहुत से बगीचे दिये ।  
 जगती—संसार । विरति—विश्राम । गोइ रही—छिपाय रही ।

## पद्माकर-रत्नावली

( १९१ )

तृन के समान धन धान राज त्याग करि,  
 पाल्यो पितु वचन जो जानत जनैया है ।  
 कहै 'पदमाकर' विवेक ही को बानो बीच,  
 साँचो सत्यवीर धीर धीरज धरैया है ॥  
 सुमृति पुरान वेद आगम कह्यो जो पंथ,  
 आचरत सोई सुद्ध करम करैया है ।  
 गोद मति मंदर पुरंदर मही को धन्य,  
 धरम धुरंधर हमारो रघुरैया है ॥

( १९२ )

झलकत आवैं झुंड झिलम झलानि झप्यो,  
 तमक न आवै तेगवाही औ सिलाही है ।  
 कहै 'पदमाकर' त्यों दुंदुभी धुकार सुनि,  
 अकबक बोलैं यों गनीम औ गुनाही है ॥  
 माधव को लाल विकराल काल हू ते दल,  
 साजि धायो ए दई दई धौ कहा चाही है ।  
 कौन को कलेज धौ करैया भयो काल अरु,  
 का पै यों परैया भयो गजब इलाही है ॥

---

तेगव ही—तलार के बांधने वाले ।



( १९३ )

ज्वाला की जलन-सी जलाक जंग जालन की,  
 जोरकी जमा है जोम जुलुम जिलाहे की ।  
 कहै 'पदमाकर' सु रहियो बचाये जग,  
 जालिम जगत्सिंह रंग अवगाहे की ॥  
 दौरि दावादारन पै द्वादसौ दिवाकर की,  
 दामिनी दमंकनि दलेल दिगदाहे की ।  
 काल की कुटुंबिनि कला है कुल्लि कालिका की,  
 कहर की कुंत की नजरि कछवाहे की ॥

( १९४ )

अधम अजान एके चढ़ि कै विमान भाष्यौ,  
 पूछत हौं गंगा तोहि परि-परि पाइहौ ।  
 कहै 'पदमाकर' कृपा करि बतावै साँची,  
 देखे अति अद्भुत रावरे सुभाइ हौं ॥  
 लेरे गुनगान हूँ की महिमा महान मैया,  
 कान-कान नाइ कै जहान मध्य छाइहौ ।  
 एक मुख गाये ताके पंचमुख पाये अब,  
 पंचमुख गाइहौं तौ केने मुख पाइहौं ॥

---

दावादारन—शत्रु । द्वादसौ दिवाकर—बारहौ सूर्य । कुंतकी—  
 भाला ।

( १९५ )

गोपी ग्वाल-मालो जुरे आपुस में कहैं आली,  
 कोऊ यसुदा के अवतर-यो इंद्रजाली है ।  
 कहै 'पदमाकर' करै को यों उताली. जापै,  
 रहन न पावै कहूँ एकौ फन खाली है ॥  
 देखै देवताली भई विधि के खुसाली कूदि,  
 किलकति काली हेरि हँसत कपाली है ।  
 जनम को चाली ए री अद्भुत है ख्याली आजु,  
 काली की फनाली पै नचत बनमाली है ॥

( १९६ )

मुरली बजाइ तान गांइ मुसुकाइ मंद,  
 लटकि लटकि माई नृत्य में निरत है ।  
 कहै 'पदमाकर' गोविन्द के उछाह अहि,  
 विष को प्रवाह प्रीति मुख है फिरत है ॥  
 ऐसो फैल परत फुसकारत ही में मानों,  
 तारन को वृंद हूतकारन गिरत है ।  
 कोप करि जौ लौं एक फन फुफकावै काली,  
 तौ सौं बनमाली सोऊ फन पै फिरत है ॥

---

इंद्रजाली—जादूगर । फनाली—फनों की कतार । निरत है—  
 लगी है । उछाह—आनन्द ।



( १९७ )

सात दिन सात राति करि उतपात महा,  
 मारुत झकोरै तरु तोरै दीह दुख में ।  
 कहै 'पदमाकर' करी त्यों धूम-धारन हूँ,  
 एते पै न कान्ह कहूँ आयो रोष रूख में ॥  
 छोर छिगुनी के छत्र-ऐसी गिरि छाड़ राख्यौ,  
 ताके तरे गाय गोप गोरी खरी सुख में ।  
 देखि देखि मेघन की सेन अकुलानी रख्यो,  
 सिन्धु में न पानी अरु पानी इंदु मुख में ॥

( १९८ )

सवैया

अंगन अंगन मांहि अनंग के,  
 तुंग तरंग उमाहत आवैं ।  
 त्यों 'पद्माकर' आसहू पास,  
 जवासन के बन दाहत आवैं ॥  
 मानवतीन के प्रानन में,  
 जु गुमान के गुजन दाहत आवैं ।  
 बान - सी बूंदन के चदरा,  
 बदरा बिरहीन पै बाहत आवैं ॥

दीह दुख में—दारुन क्लेश । पानी—जौहर । अनंग—काम ।  
 जवासन—घास विशेष । दाहत—जलाती है । बाहत—चलाता है ।

१००

## षट्पाकर-रत्नावली

( १९९ )

चांसुरी है लगौं मोहन के मुख,  
 माल है कंठ तजौं नहिं फेरी ।  
 त्यों 'षट्पाकर' है लकुटी रहौं,  
 कान्हर के कर धूमि घनेरी ॥  
 पीत पटी है कटी लपटौं,  
 घट तें न घटै चित-चाह जु ए री ।  
 दै वरदान यहै हमकों,  
 सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी ॥

( २०० )

वा बन-बाग की मालिनि हवै,  
 पहिरावहुं माल विसाल घनेरी ।  
 त्यों 'षट्पाकर' पान खवावहुं,  
 खासी खासिन हवै मुख हेरी ॥  
 श्री नंदनन गुबिंद गुनाकर,  
 के घर की कहवावहुं चेरी ।  
 दे वरदान यहै हम को,  
 सुनिये गनगौर गुसाइन मेरी ॥

लकुटी—छड़ी । गनगौर—देवी विशेष । घनेरी—बहुत सी ।  
 चेरी—दासा ।



( २०१ )

गोकुल के कुल को तजि कै  
 भजि कै बन वीथिन में बढि जैये ।  
 त्यों 'पदमाकर' कुंज कछार,  
 विहार पहारन में चढ़ि जैये ॥  
 हैं नँदनंद गुबिंद जहाँ,  
 तहाँ नंद के मन्दिर में मढ़ि जैये ।  
 यों चित चाहत ए री भट्ट,  
 मनमोहनै लै कै कहूँ कढ़ि जैये ॥

( २०२ )

गैल में गाइ कै गारी दर्ई  
 फिरि तारी दर्ई ओ दर्ई पिचकारी ।  
 त्यों 'पदमाकर' मेलि मुठी,  
 इत पाइ अकेली करी अधिकारी ॥  
 सौहैं बबा की करे हौँ कहौँ,  
 यहि फाग को लेहुँगी दाँव विहारी ।  
 का कबहुँ मरि आइ हौ ना,  
 तुम नंद किसोर या खोरि हमारी ॥

कुल का—वंश मर्यादा की त्याग कर । बनवीथिन—बन की पग  
 डंडीयों में । कछार—किनारे पर । मढ़ि—चले जाय । भट्ट—सखी ।  
 मेलि मुठा—अर्धर की मुठा चला कर । दाँव—बदला । खोरि—मली ।

१०२

पद्माकर रत्नावली

( २०३ )

धारत ही बन्यो ये ही मतो  
 गुरु लोगन को डर डारत ही बन्यो ।  
 हारत ही बन्यो हेरि हियो,  
 'पदमाकर' प्रेम पसारत ही बन्यो ॥  
 बारत ही बन्यो काज सचै,  
 अब यों मुख चंद उधारत ही बन्यो ।  
 टारत ही बन्यो घूँघट को पट,  
 नंदकुमार निहारत ही बन्यो ॥

( २०४ )

को किहि को सुत को किहि को पितु,  
 को किहि को पति कौन की को ती ।  
 कौन को को जग ठाकुर चाकर,  
 को 'पदमाकर' कौन को गोती ॥  
 जानकी जीवन जानि यहै,  
 तजि दे तू सवै धन धाम औ धोती ।  
 हौं तो न लोटतो लोभ लपेट में,  
 पेट की जो पै चपेट न होती ॥

पसारत—फैलाते । पट—वस्त्र । निहारत—देखते । ती—पत्नी ।  
 गोती—वंशज । चपेट—चिन्ता ।



( २०५ )

जैसे जरा के जरा कहि जागत,  
जात हूँ मैं न रहै छवि छाजी ।  
ज्यों कलिकाल के व्यालन तें,  
‘पदमाकर’ भक्ति फिरै भ्रम भाजी ॥  
त्यों मुख राम के नाम के लागत,  
यों उठि जात कुपातक पाजी ।  
ज्यों छिन एक ही में छुटि जात है,  
आतस के लगे आतसबाजी ॥

( २०६ )

पेट की चौरै चपेट सही,  
परमारथ स्वारथ लागि बिगारे ।  
त्यों ‘पदमाकर’ भक्ति भजी,  
सुनि दंभ के द्रोह के दीह नगारे ॥  
कौन के आसरे आस तजौं,  
सुधि लेत न क्यों दसरथ दुलारे ।  
जोगरु जड़ जपोतप जाल,  
बिहाल परे कलिकाल के मारे ॥

---

जरा—बुढ़ापा । व्यालन—सर्पों में । पाजी—दुष्ट । आतस—  
अग्नि । स्वारथ लागि—अपने मतलब के लिये । द्रोह—वैर । दीह—  
बड़े बड़े । आस—अभिलाषा । बिहाल—ब्याकुल ।

( २०७ )

यों मन लालची लालच में लगी,  
 लोभ तरंगन में अवगाह्यो ।  
 त्यों 'पदमाकर' गेह के देह के,  
 नेह के काज न काहि सराह्यो ॥  
 पाप किये पै न पातकी पावन,  
 जानि कै राम को नेह निवाह्यो ।  
 चाह्यो भयो न कछू कवहूँ,  
 जमराज हूँ सों वृथा बैर विसाह्यो ॥

( २०८ )

या जग जीवन को है यहै फल,  
 जो छल छॉड़ि भजै रघुराई ।  
 सोधि कै संत महंतन हूँ,  
 'पदमाकर' बात यहै ठहराई ॥  
 है रही होनी प्रयास विना,  
 अनहोनी न है सकै कोटि उपाई ।  
 जो विधि भाल में लीकि लिखी,  
 सो बढ़ाई बढ़ै न घटै न घटाई ॥

---

अवगाह्यो—फसा रहा । गेह—घर । सराह्यो—प्रशंसा की ।  
 पातकी पावन—पापों के उद्धार करने वाले । चाह्यों भयो न—मन  
 चाहा कभी नहीं हुआ । लीखि—रेखा ।



( २०९ )

पापी अजामिल पार कियो,  
 जेहि नाम लियो सुत ही को नरायन ।  
 त्यों 'पदमाकर' लात लगे गहे,  
 विप्र हू के पग चौगुने चायन ॥  
 को अस दीनदयाल भयो,  
 दसरत्थ के लाल—से सूधे सुभायन ।  
 दौरे गयंद उबारिवे को प्रभु,  
 बाहनै छोड़ि उबाहने पायन ॥

( २१० )

चारिन गोरिन में मिलि कै,  
 इतै आई ही हाल गुवाल कहाँ की ।  
 को न बिलोकि रह्यो 'पदमाकर'  
 बा तिय की अवलोकनि बाँकी ॥  
 बीर अबीर की धूंधरि में,  
 कछु फेर-सो कै मुख फेरि कै झाँकी ।  
 कै गई काटि करेजन के,  
 कतरे-कतरे पतरे करिहाँ की ॥

---

विप्र हू के पग—भृगुपद । चौगुने चायन—बड़े प्रेम को । गयंद—  
 हाथी । बाहनै—सवारी । उबाहने—नंगे पाँव । बिलोकि—देखकर ।  
 अवलोकनि—दृष्टि । बीर—सखी । फेर-सो—टोक करके । करिहाँ—  
 कमरवाली ।

१०६

पद्माकर रत्नावली

( २११ )

कान्ह पगे कुवजा के कलोलनि,  
 डोलनि छोड़ दई हर भाँती ।  
 माधुरी मूरति देखे बिना,  
 'पदमाकर' लागै न भूमि सोहाती ॥  
 का कहिये उन कों सजनी,  
 यह बात है आपने भाग समाती ।  
 दोष वसंत को दीजै कहा  
 उलहै न करील की डारन पाती ॥

( २१२ )

औसर कौन, कहा समयो,  
 कहा काज, विवाद ये कौन-सी पावन ।  
 त्यों 'पदमाकर' धीर समीर  
 उसीर भयो तपि कै तन-नावन ॥  
 चैत की चाँदनी चारु लखे,  
 चरचा चलिये की लगे जु चलावन ।  
 कैसी भई तुम्हें गंग की गैल में,  
 गीत मदारन के लगे गावन ॥

---

सजनी—सखी । उलहै—निकले । करील—भाड़ी विशेष ।  
 विवाद—भगड़ा । उसीर—चन्दन । तन-तावन—शरीर को जलाने  
 वाला । मदारन—मुसलमानों के पोर विशेष ।



( २१३ )

शुभ शीतल मंद सुगंध समीर,  
 कछू छल-छन्द से छूवै गये हैं ।  
 'पदमाकर' चाँदनी चँद हू के,  
 कछू औरहि डौरन चै गये हैं ॥  
 मनमोहन सों बिछुरे इत ही,  
 बनि कै न अवै दिन द्वै गये हैं ।  
 सखि वे हम से तुम वेई बने,  
 पै कछू-के-कछू मन हूँ गये हैं ॥

( २१४ )

धीर समीर सु तीर तें तीछन,  
 ईछन कैस हु ना सहती मैं ।  
 त्यों 'पदमाकर' चाँदनी चंद,  
 चितै चहुँओरन चौकती जी मैं ॥  
 छार्ई बिछार्ई पुरैन के पातन,  
 लेटती चंदन की चवकी मैं ।  
 नीच कहा बिरहा करतो सखि,  
 होती कहूँ जो पै मीच मुठी मैं ॥

डौरन—ढंग के । चौकती जी—बिकल हो उठती । पुरैन के  
 पातन—कमल के पत्ते । बिरहा—वियोग । मीच मुठी मैं—  
 मृत्यु अपने हाथ में होता । चवकी—चौकी ।

१०८

## पद्माकर-रत्नावली

( २१५ )

ऐसी न देखी सुनी सजनी,  
 घनी बाढ़त जात वियोग की बाधा ।  
 त्यों 'पदमाकर' मोहन वे,  
 तब तें कल है न कहूँ पल आधा ॥  
 लाल गुलाल घलाघल में,  
 दृग टोकर है गई रूप अगाधा ।  
 कै गई कै गई चेटक सी,  
 मन लै गई लै गई लै गई राधा ॥

( २१६ )

है थिर मंदिर में न रह्यो,  
 गिरि कंदर में न तथ्यो तप जाई ॥  
 राज रिभाये न कै कविता,  
 रघुराज कथा न यथामति गाई ॥  
 यो पछितात कछू 'पदमाकर'  
 का सों कहौं निज मूरखताई ।  
 स्वारथ हू न कियो परमारथ,  
 यों ही अकारथ वैस विताई ॥

वियोग की बाधा—विरह की व्याधि । रूप अगाधा—अत्यन्त सुन्दरी । गिर-कंदर—पहाड़ की गुफा । यथामति—बुद्धि के अनुसार ॥ अकारथ—बेकार ।



( २१७ )

देखत क्यों न अपूर्व इंदु में,  
 द्वै अरविंद रहे गहि लाली ।  
 त्यों 'पदमाकर' कीर बधू इक,  
 मोती चुगै मनों है मतवाली ॥  
 ऊपर तें तम छाया रह्यो,  
 रवि की दब तें न दबै खुलि ख्याली ।  
 यों सुनि बैन सखी के विचित्र,  
 भये चित चकित से बनमाली ॥

( २१८ )

मोहि न सोच इतौ तन प्रान को,  
 जाइ रहै कि लहै लघुताई ।  
 ये हु न सोच घनो 'पदमाकर'  
 साहिबी जो पै सुकंठ की पाई ॥  
 सोच यहै इक बालि बधू बिन,  
 देहिगो अंगद की युवराई ।  
 यों बच बालि बधू के सुने,  
 करुनाकर को करुना कछु आई ॥

इन्दु—मुख रूपी चन्द्रमा । द्वै अरविंद—दो कमल रूपी आँखें ।  
 कीर बधू—तोते की नाक । मोती चुगै—लटकन । तम छाई रह्यो—  
 केश रूपी आंधकार । चकित-से—चकित । सुकंठ—सुग्रीव । बालि-बधू—  
 तारा । बच—बाणी ।

११०

पद्माकर-रत्नावली

( ११९ )

चंद्रकला चुनि चूनरी चारु,  
 दर्ई पहिराइ सुनाइ सु होरी ।  
 बेदी बिसाखा रची 'पदमाकर'  
 अंजन अँजि समाजि कै रोरी ॥  
 लागी जबै ललित पहिरावन,  
 कान्ह को कंचुकी केसरि बेरी ।  
 हेरि हँसे मुसकाई रही,  
 अँचरा मुख दै वृषभान किसोरी ॥

( १२० )

ए ब्रजचंद गोविंद गोपाल,  
 सुन्यो न क्यों केते कलाम किये मैं ।  
 त्यों 'पदमाकर' आनंद के नद,  
 हौ नंदनंदन जानि लिये मैं ॥  
 माखन बेरी कै खोरिन हूँ चले,  
 भाजि कछू भय मानि जिये मैं ।  
 दूरि ही दौरि दुरे जो चहौ तौ,  
 दुरौ निज मेरे अँधेरे हिये मैं ॥

---

चन्द्रकला—नाम विशेष । बिसाखा—नाम है । अंजनि अँजि—  
 काजल लगा कर । अँचरा—खूट । वृषभान-किसोरी— राधा । खोरिन—  
 गल्लो में । जिये—हृदय में । दुरे—छिपे ।



( २२१ )

जा छिन तें सुनि साँवरे रावरे,  
 लागे कटाच्छ कछू अनियारे ।  
 त्यों 'पदमाकर' ता छिन तें,  
 तिय सों अँग अँग न जात सँभारे ॥  
 हूँ हिय हायल घायल सी,  
 घन घूम गिरी परी प्रेम तिहारे ।  
 नैन गये फिरि फैन बहै मुख,  
 चैन रह्यो नहिँ मैन के मारे ॥

( २२२ )

काँपि रहे छिनु सोवत हूँ,  
 कछु भाषिबो मो अनुसारि रही है ।  
 त्यों 'पदमाकर' रंच रुमंचनि  
 स्वेद के बुंदन धारि रही है ॥  
 वेष दिखादिखी के सुख में,  
 तन की तनकौ न सँभार रही है ।  
 जानति हौँ सखि सापने में,  
 नँदलाल कों नारि निहारि रही है ॥

अनियारे—नुकाले । ता छिन तें—उस समय से । फैन—मुख में  
 फेना आ गया । मैन—कामदेव के । रुमंचनि—रोयें खड़ा होना ।  
 स्वेद के बुंदन—पसीना । सँभार—चेतना । निहारि—देख रही है ।

११२

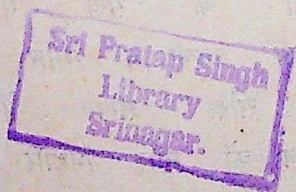
पद्माकर-रत्नावली

( २२३ )

जैसा तैं न मोसो कहूँ नेक हूँ डरात हुतौ,  
 ऐसौ अब हौँहूँ तोसो नेक हूँ न डरिहौं ।  
 कहे 'पद्माकर' प्रचड जो परैगो तौ,  
 उमड कर तोसों भुजदंड ठोंकि लरिहौं ॥  
 चलो चलु चलो चलु विचलु न बीच ही तें,  
 कीच बाध नीच तो कुटुंब को कचरिहौं ।  
 हरे दगादार मेरे पातक अपार तोहिं,  
 गंगा की कछार में पछारि छार करिहौं ॥

 SPS  
 391.431 K 69 P


14515



प्रचण्ड जो परैगो तौ—याद धृष्टता करेगा तो !





अनुपम अवसर से लाभ उठाइये

# आलोक पुस्तकमाला

सुलभ मूल्य में हिन्दी की उत्तम कृतियों का आनन्द लेना हो तो आलोक पुस्तकमाला की पुस्तकें अवश्य पढ़िये । पुस्तकमाला पाँच भागों में विभक्त है; यथा १ कविता ( हरा कवर ), २ उपन्यास तथा कहानी ( लाल कवर ), ३ ऐतिहासिक ( नीला कवर ), ४ संस्कृत तथा धार्मिक साहित्य ( अबोरी कवर ), ५ अन्य विषय ( बैजनी कवर ) । प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ॥) है ।

- १—रसखान रत्नावली
- २—भर्तृहरि शतक ( सरल हिन्दी अर्थ सहित )
- ३—कविवर सोमनाथ की रासपञ्चाध्यायी
- ४—स्मृति शक्ति
- ५—रावर्ट क्लाइव
- ६—पद्माकर रत्नावली
- ७—घनानन्द रत्नावली
- ८—सेनापति रत्नावली
- ९—देव रत्नावली❀
- १०—भूषण रत्नावली❀
- ११—विहारी सतसई❀
- १२—वृन्द सतसई❀

\* छप रही है ।

पता—भारतवासी प्रेस, दारुमंज, इलाहाबाद ।



